Vol. 9 | Issue-1 JANUARY-MARCH, 2026

RNI : UPBIL/2020/79032

सहयोग राशि : मात्र ₹ 30/- प्रति

FAARD FOUNDATION फार्ड फाउण्डेशन

FOUNDATION FOR ADVANCEMENT OF AGRICULTURE AND RURAL DEVELOPMENT

कृषि प्रगति एवं ग्रामीण विकास संस्था

कृषि, ग्रामीण विकास, शिक्षा, पर्यावरण, स्वास्थ्य व उद्यमिता की दिशा में समर्पित

फार्ड संवाद
FAARD SAMVAAD

सन्देश

कृषि और जलवायु प्रबन्धन

बदलते वैश्विक जलवायु परिदृश्य में यह समझना अत्यंत आवश्यक है कि जलवायु परिवर्तन का कृषि और कृषि प्रबंधन पर क्या–क्या गंभीर प्रभाव पड़ता है और आगे भी पड़ता रहेगा। प्रायः यह कहा जाता है कि कृषि ग्रीनहाउस गैस (GHG) उत्सर्जन और जलवायु परिवर्तन में दूसरा सबसे बड़ा योगदानकर्ता है। विश्व की कुल आबादी की 17% के साथ भारत वैश्विक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में 6.7% (1.7 टन CO2 / व्यक्ति / वर्ष) का योगदान देता है और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में दूसरा सबसे बड़ा योगदानकर्ता है। कुल वैश्विक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कृषि का योगदान 14%, उद्योग का 8%, अपशिष्ट का 3% है तथा शेष उत्सर्जन जीवाश्म ईंधन और अन्य स्रोतों का होता है।कृषि से होने वाले कुल 14% उत्सर्जन में से 55% पशुपालन से, 17% उर्वरकों से, 17% धान के खेतों से, 7% खाद प्रबंधन से और 2% फसल अवशेष जलाने से होता है। ऐसे परिदृश्य में यह देखना अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है कि किस प्रकार कृषि पद्धतियाँ और कृषि अनुसंधान प्रौद्योगिकी, जलवायु परिवर्तन के कृषि पर पड़ने वाले प्रभावों को कम कर सकती हैं तथा कार्बन फुटप्रिंट को न्यूनतम करके कार्बन उत्सर्जन को घटाते हुए जलवायु परिवर्तन प्रबंधन में योगदान दे सकती हैं। एक ओर ग्रीनहाउस गैसों में कमी करना और दूसरी ओर कृषि उत्पादन बढ़ानाकृयह किसानों और वैज्ञानिकों दोनों के लिए एक बड़ी चुनौती है। जलवायु परिवर्तन ग्लोबल वार्मिंग, अति विषम मौसम की घटनाओं, वर्षा की अनिश्चितता के माध्यम से कृषि उत्पादन को प्रभावित करता है, और कृषि ग्रीनहाउस गैस के उत्सर्जन के माध्यम से जलवायु परिवर्तन को प्रभावित करती है। जलवायु परिवर्तन का प्रभाव फसलों, मृदा, पशुधन और मत्स्य प्रबंधन पर पड़ता है।राष्ट्रीय विकास परिषद (NDC) ने 2030 तक 2.5–3 अरब टन कार्बन के बराबर का अतिरिक्त कार्बन सिंक बनाने का लक्ष्य रखा है और वर्ष 2021 तक हम 1.97 अरब टन कार्बन के बराबर का लक्ष्य प्राप्त कर चुके हैं और आशा है कि निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त कर लेंगे। यह उपलब्धि भारत सरकार की कई जलवायु और कृषि–संबंधी नीतियों के कारण संभव हुई है, जैसेकृसतत खाद्य उत्पादन और उपभोग के लिए राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (NFSM), राष्ट्रीय सतत कृषि मिशन (NMS), जलवायु परिवर्तन के लिए रणनीतिक ज्ञान आधारित राष्ट्रीय मिशन (NMSKC), राष्ट्रीय सुपरकंप्यूटिंग मिशन (NMS), राष्ट्रीय पशुधन मिशन (NLM), कार्बन अनुक्रमण (सीक्वेस्ट्रेशन) के लिए राष्ट्रीय कृषि परियोजना (NAP), किसानों की आय बढ़ाने के लिए कार्बन क्रेडिट तथा राष्ट्रीय जल मिशन (NWM)। कुछ नवीन उपक्रम जैसे PM-PRANAM, गोबरधन (कचरे को संपदा में बदलना), आर्द्रभूमि और मैंग्रोव का संरक्षण, तथा हरित क्रेडिट योजना के रूप में राष्ट्रीय प्राकृतिक खेती मिशन (NMNF) ये सभी कृषि से होने वाले कार्बन उत्सर्जन को कम करके जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को घटाने और जलवायु विविधताओं के कृषि उत्पादन पर प्रभावों को कम करने की दिशा में सकारात्मक कदम हैं। किसानों द्वारा आधुनिक प्रौद्योगिकियों को अपनाने और वैज्ञानिकों द्वारा अग्रणी क्षेत्रों में आगे के अनुसंधान– जैसे सटीक कृषि (प्रिसीजन एग्रीकल्चर), जल प्रबंधन और नवाचार, सतत पशुधन प्रबंधन, अपशिष्ट से संपदा की चक्रीय अर्थव्यवस्था, कृषि ऊर्जा प्रबंधन और जलवायु–आधारित कृषि पद्धतियों– में सफलता प्राप्त करने के लिए किसानों और वैज्ञानिकों को मिलकर कार्य करना होगा, ताकि एक ठोस और प्रदर्शनकारी प्रभाव उत्पन्न हो सके। यह कहने कि आवश्यकता नहीं है कि कम–कार्बन उत्सर्जन करने वाली कृषि तकनीकों और पद्धतियों को प्रोत्साहित करने वाली नीतियाँ और व्यवस्था स्थापित की जानी चाहिए। नीतियों के अंतर्गत किसानों को कार्बन अनुक्रमण, जैव विविधता संवर्धन और जल संरक्षण के लिए पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं के भुगतान (Payments for Ecosystem Services) के माध्यम से प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। इन सभी प्रयासों को गति देने के लिए कृषि को सरकार की जलवायु नीति, व्यापार नीति और ऊर्जा नीति की मुख्यधारा में लाना आवश्यक है, ताकि यह तीन को संबोधित कर सके– उत्पादकता (Productivity) विज्ञान आधारित गहनता के माध्यम से बढ़ती जनसंख्या का पोषण करनाय लाभप्रदता (Profitability) विविधीकरण, मूल्य संवर्धन और बाजार एकीकरण के माध्यम से छोटे किसानों के लिए खेती को आर्थिक रूप से व्यवहार्य बनानाय और ग्रहीय स्वास्थ्य (Planetary Health) मृदा, जल और जैव विविधता को पुनर्स्थापित करना तथा कृषि के पर्यावरणीय प्रभाव को कम करना।

प्रो. पंजाब सिंह, अध्यक्ष

इस अंक में :

संदेश	1
सम्पादकीय	2
समन्वित कृषि प्रणाली में अधिक लाभ हेतु सब्जियों की खेती	3
प्याज की उन्नत खेती	6
मधुमक्खी के आर्थिक महत्व एवं उन पर लगने वाले परजीवी तथा उसका समाधान	9
उत्तर प्रदेश में राई-सरसों खेती की वर्तमान स्थिति एवं संभावनाएं	12
गतिविधियाँ	16

FAARD FOUNDATION फार्ड फाउण्डेशन

FOUNDATION FOR ADVANCEMENT OF AGRICULTURE AND RURAL DEVELOPMENT

कृषि प्रगति एवं ग्रामीण विकास संस्था

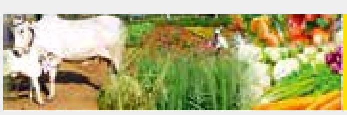

कृषि, ग्रामीण विकास, शिक्षा, पर्यावरण, स्वास्थ्य व उद्यमिता की दिशा में समर्पित

सम्पादकीय मण्डल

अध्यक्ष

प्रो. पंजाब सिंह

पूर्व सचिव

कृषि अनुसंधान एवं शिक्षा विभाग,भारत सरकार

एवं

पूर्व महानिदेशक

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

प्रधान सम्पादक

प्रो. आर. एम. सिंह

पूर्व डीन

कृषि विज्ञान संस्थान, बीएचयू, वाराणसी

प्रबन्ध सम्पादक

प्रो. एस. आर. सिंह

पूर्व निदेशक

कृषि विज्ञान संस्थान, बीएचयू, वाराणसी

सम्पादक

डॉ. राजेश सिंह

पी.आर.ओ., बीएचयू, वाराणसी

उप-सम्पादक

डॉ. उमेश सिंह

ट्रेनिंग एवं प्लेसमेंट अधिकारी, बीएचयू, वाराणसी

सहायक सम्पादक

श्री चंदर शेखर

ए.पी.आर.ओ., बीएचयू, वाराणसी

कोषाध्यक्ष

राम कुमार राय

शिवांश एग्रो प्रोड्यूसर कंपनी, गाजीपुर

सम्पर्क नं. 7753073362

रजिस्टर्ड कार्यालय

फार्ड फाउण्डेशन

सरस्वती कुंज, नरायणपुर (डाफी) पोस्ट ऑफिस-नैपुरा, जिला-वाराणसी-221 011 (उ.प्र.)

e-mail: faardvaranasi@gmail.com

Website : www.faard.org

सम्पादकीय

फसल उत्पादन में गुणवत्तापूर्ण बीज का महत्व

फसल उत्पादकता में गुणवत्ता पूर्ण बीज का अहम् योगदान है। यदि बीज अच्छा है तो 50 प्रतिशत उत्पादन का श्रेय इसे ही जाता है एवं शेष 50 प्रतिशत अन्य फसल प्रबंधन कारकों के कारण होता है। गुणवत्ता पूर्ण बीज के प्रकार जानना आवश्यक है जो केन्द्रीय बीज, प्रजनक बीज, आधारीय बीज तथा प्रमाणित बीज हैं। इनमें से किसानों को प्रमाणित बीज फसल उत्पादन हेतु उपलब्ध होता है। जो किसान बीज उत्पादन का कार्य करते हैं उन्हें प्रजनक बीज से आधारीय तथा प्रमाणित बीज बनाना होता है। पहचाने के लिए इनके बोरे पर क्रमशः पीले (12सेमी x 6 सेमी), सफेद (15सेमी x 7.5सेमी) तथा नीले (15सेमी x 7.5 से मी) रंग के टैग लगे होते हैं। जिनका आकार क्रमशः कोष्ट में दिया है। अतः किसान भाईओं को चाहिए कि उत्पादन एवं अपनी आय बढ़ाने हेतु विश्वसनीय स्रोतों से ही प्रमाणित बीज प्राप्त करें और उनका उपयोग करें।

किसान अधिकतर अपने बचे हुए बीज का प्रयोग करते हैं जिससे उत्पादन कम होता है। यदि वे प्रमाणित बीज का उपयोग करते हैं तो स्वयं परागित फसलों जैसे गेहूं, धान, मटर, चना आदि में उनका तीन साल तक प्रयोग कर सकते हैं। उसके बाद बीज में विभिन्न कारणों से मिलावट होने से उत्पादन में गिरावट आ जाती है। पर परागित फसलों जैसे मक्का, बाजरा आदि का उन्हें हर वर्ष संकर बीज खरीदना पड़ता है अन्यथा बचे हुए बीज का प्रयोग करने से अगले वर्ष लगभग उत्पादन में 50 प्रतिशत की कमी होती है। इन फसलों में संकुल बीज को दो से तीन वर्षों तक प्रयोग कर सकते हैं। अतः फसल उत्पादन में गुणवत्तापूर्ण बीज का महत्व बहुत ज्यादा है क्योंकि ये उच्च अंकुरण दर, मजबूत रोग प्रतिरोधक क्षमता और बेहतर पोषक तत्व अवशोषण के जरिए अधिक पैदावार सुनिश्चित करते हैं, जिससे किसानों को आर्थिक लाभ मिलता है और टिकाऊ खेती को बढ़ावा मिलता है। ये बीज बेहतर जड़ प्रणाली और रासायनिक आदानों पर निर्भरता कम करके कृषि को अधिक लचीला बनाते हैं और खाद्य सुरक्षा में योगदान करते हैं।

अच्छे बीज बेहतर अंकुरण और विकास से उत्पादन में 20–25% तक अधिक उपज देते हैं जिससे इनकी रोग और कीट प्रतिरोधक क्षमता से कीटनाशकों का खर्च और पर्यावरणीय प्रभाव कम होता है। इनकी जड़ प्रणाली बेहतर होती है, जो मिट्टी से पोषक तत्वों और पानी का कुशलतापूर्वक अवशोषण करते हैं। ये उर्वरकों और अन्य आदानों के प्रति बेहतर प्रतिक्रिया देते हैं, जिससे उनका प्रभावी उपयोग होता है और जलवायु परिवर्तन जैसी चुनौतियों के लिए लचीलापन बढ़ाते हैं। विश्वसनीय स्रोतों से प्रमाणित बीज चुनने पर फसल के नुकसान का जोखिम कम होता है।

संक्षेप में गुणवत्तापूर्ण बीज सिर्फ फसल की शुरुआत नहीं, बल्कि पूरे कृषि तंत्र की बुनियाद हैं, जो किसानों की आय बढ़ाने, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और पर्यावरण की रक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

-संपादक

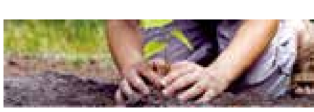

जैविक खेती करें किसान
सुधरे भूमि हो धनवान.

समन्वित कृषि प्रणाली में अधिक लाभ हेतु सब्जियों की खेती

एस.के. सिंह, नीरज सिंह, स्वाति शर्मा
भा.कृ.अनु.प.—भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी

सब्जियाँ हमारे दैनिक आहार का एक अभिन्न अंग है। इनके प्रयोग से भोज्य पदार्थ अधिक स्वादिष्ट, रूचिकर, खाने की इच्छा के बढ़ाने वाले होते है। सब्जियां, प्रोटीन, खनिज तत्व एवं विटामिन तथा खाद्य रेशा के स्रोत है। मुनष्य के शरीर की आवश्यकता पूर्ति की लगभग सभी आवश्यक खनिज तत्वों, विटामिन और अन्य रासायनिक अवयव सब्जियों में मौजूद होते हैं। सब्जियाँ अन्य फसल की तुलना में विटामिनों की प्राप्ति का सस्ता एवं अच्छा साधन है। सोलेनसी एवं जड़वाली फसला में विटामिन डी पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है जो हमारे शरीर की हड्डियों के लिए लाभकारी है। सब्जियों में विद्यमान औषधीय गुण के कारण इनका महत्व और भी बढ़ जाता है। सब्जियों के नियमित सेवन से आंखों की रोशनी बढ़ती है, रक्तल्पता की समस्या नहीं होती। अतः भारत जैसे देश में जहां बहुत बड़ी जनसंख्या शाकाहारी भोजन पर निर्भर हैं, सब्जियां पोषण सुरक्षा के लिए अति आवश्यक है।

हमारे देश में एक आम आदमी की भोजन की थाली में अनाज की मात्रा ज्यादा तथा सब्जियों की मात्रा बहुत ही कम होती है जबकि विकसित देशों में लोग 328 ग्राम अनाज, 316 ग्राम सब्जियां एवं 362 ग्राम फल उपयोग करते हैं। एक मानक के अनुसार व्यक्ति को औसतन 350 ग्राम सब्जियों का प्रतिदिन सेवन करना चाहिए। हमारे देश में सब्जी की उपलब्धता 270 ग्राम/व्यक्ति/दिन है।

भारत विश्व में दूसरा सबसे बड़ा सब्जी उत्पादक देश है। वर्तमान समय में हमारे देश में 10.25 मिलियन हेक्टेयर से लगभग 211.77 मिलियन मिट्रिक टन सब्जियों का उत्पादन होता है, जिसे वर्ष 2030 तक बढ़ाकर 220 मिलियन मिट्रिक टन करने की आवश्यकता है। इस उत्पादन लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु हमें सब्जियों की उत्पादकता के साथ—साथ उनका क्षेत्रफल भी बढ़ाना होगा। बढ़ते शहरीकरण एवं जनसंख्या विस्फोट के कारण खेती योग्य भूमि घटती जा रही है। खेती करने योग्य भूमि का उपयोग सड़क, मकान, फैक्ट्रीयां इत्यादि के बनाने से दिन प्रतिदिन कम हो रहा है और जोत का आकार भी घट रहा है। ऐसी परिस्थिति में उत्पादन बढ़ाने के लिए खेती की सघनता को बढ़ाना होगा। वर्तमान समय में भारत की शस्य सघनता 1.33 है, इसको बढ़ाने आवश्यकता है।

सारिणी—1 धान—गेहू फसल प्रणाली में सब्जी द्वारा शस्य सघनता एवं आर्थिक लाभ

कम संख्या	फसल प्रणाली	फसल संघनता	धान समतुल्य उत्पादन (टन/हे.)	कुल लाभ (रु./हेक्टे.)	फसल प्रणाली से शुद्ध लाभ (रु./हे./दिन)	लागत लाभ अनुपात
1	धान—गेंहू	200	11.3	68600	188	2.58
2	धान—आलू—प्याज	300	29.8	148500	406	2.12
3	धान—गेंदा—राजमा	300	30.1	168000	460	2.90
4	धान—पत्तागोभी—प्याज	300	24.2	131800	361	2.66

भारत में खेती में छोटे जोत होने के कारण कृषि से लाभ घटकर नगण्य रह गया है। हमारे देश में अधिकतर किसान (85 से 92 प्रतिशत) छोटे एवं सीमांत हैं जिनके जोत का आकार 1—2 हेक्टेअर है। छोटे किसानों की आय बढ़ाने में समन्वित कृषि प्रणाली अहम भूमिका निभा सकती है। समन्वित कृषि प्रणाली में सब्जिया एक प्रमुख घटक है। हमारे देश में विभिन्न क्षेत्रों क` लिए कई प्रकार के समन्वित कृषि प्रणाली का विकास किया गया है। अधिकतर समन्वित कृषि प्रणालियों में सब्जियों की खेती को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। चूंकि सब्जियों से अधिक लाभ प्राप्त होता है, इसलिए सब्जियां इन समन्वित कृषि प्रणालियों को सतत बनाने में महत्वपूर्ण घटक है।

भारत में जलवायु एवं मिट्टी की भिन्नता के आधार पर विभिन्न क्षेत्रों में खेती में विविधता पाई जाती है। मौसम कारकों के अनुरुप एवं सिंचाई की उपलब्धता के अनुसार विभिन्न फसल पद्धतियां प्रचलित है। हमारे देश में धान एवं गेंहू प्रमुख फसलें हैं और धान—गेंहू फसल चक्र बहुप्रचलित प्रणाली है। फसल प्रणालियों में सब्जियों को लगाकर फसल सघनता के साथ—साथ शुद्ध लाभ बढ़ाया जा सकता है। जैसे— गंगा के मैदानी भागों में धान—गेहूँ, के मध्य हम एक अल्प अवधि की सब्जी फसल (सब्जी मटर, पालक, मूली इत्यादि) ले सकते हैं। इसके लिए मटर की अगेती प्रजाति काशी नन्दिनी, आजाद मटर—3 को लिया जा सकता है। इसी प्रकार जिन क्षेत्रों में मक्का—गेहूँ की प्रणाली है इसमें मक्का—आलू—गेहूँ—लोबिया प्रणाली अपनाकर सब्जियों को समावेश किया जा सकता है। उपयुक्त सब्जी आधारित फसल प्रणाली अपनाकर किसान न केवल उत्पादन में वृद्धि प्राप्त कर सकते हैं अपितु संसाधनों/कृषि के आदानों की उपयोग दक्षता को बढ़ाकर खेती की कुल लागत में कमी कर सकते हैं जिससे शुद्ध लाभ में बढ़ोत्तरी हो सकती है जैसा की सारिणी 2 में दर्शाया गया है—

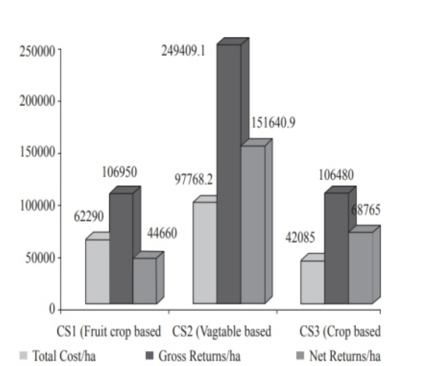

Figure 1: Comparative performance of different farming systems in terms of profitability

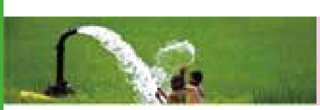

स्वस्थ फसल, स्वस्थ परिवार

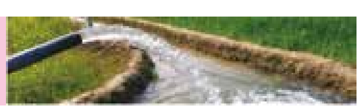

सब्जियां विटामिन, खनिज लवण एवं प्रोटीन के स्त्रोत है अतः सब्जियों को पारम्परिक फसल प्रणाली में समावेश कर फसल प्रणाली की पोषण क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। फसल पद्धति से अधिक मात्रा में प्रोटीन तथा विटामिन–सी प्राप्त करने के लिए मटर–टमाटर–मूली और विटामिन–ए के लिए टमाटर–भिण्डी–चौलाई फसल चक्र को अपनाया जा सकता है। सब्जियां कम अवधि में प्रति इकाई अधिक उत्पादन देने में सक्षम है। सब्जियां से अन्य फसलों की तुलना में 4–10 गुना अधिक उत्पादन प्राप्त होता है। यह आय का एक प्रमुख स्रोत भी हैं । सब्जियों को एक नगदी फसल के रुप में खेती की जाती है। किसान अपनी रोज के घरेलू खर्चों को सब्जियों की खेती कर समायोजित कर सकता है। हमारे देश में विभिन्न प्रकार की सब्जियों की खेती खरीफ, रबी एवं जायद में की जाती है। जलवायु एवं भूमि दशा के अनुसार विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ वर्ष भर ली जा सकती है। सब्जियां बहुत से कृषि आधारित उद्योगों के लिए आवश्यक कच्चा माल भी उपलब्ध कराती है। यह रोजगार सृजन भी करती है। हमारे देश में कृषि में गहन शोध एवं अनुसंधान के पश्चात् विभिन्न सब्जियों की अगेती, मध्यम एवं पिछेती समय में उगाई जाने वाली प्रजातियों के साथ – साथ उनकी उत्पादन तकनीकीयों का विकास हुआ जिसको खेती में उपयोग कर कम समय में फसल संघनता बढ़ाकर अधिक पैदावार ली जा सकती है और साथ ही अधिक आमदनी प्राप्त की जा सकती है। आमतौर पर किसी भी फसल चक्र में सब्जियों के समावेश करने पर फसल चक्र की शुद्ध आमदनी बढ़ जाती है और जो लाभ प्राप्त होता है उसका कुछ अंश फसल चक्र की अन्य फसलों के आदानों पर व्यय किया जा सकता है। और इस प्रकार पूरे फसल चक्र का उत्पादन क्षमता बढ़ाया जा सकता है। भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान पर एक परीक्षण में 7 सब्जी आधारित फसल चक्र (सारिणी 3) का मूल्यांकन किया गया। मिर्च–गेहूं–लोबिया फसल अनुक्रम सबसे लाभदायक फसल चक्र साबित हुआ जिसमें अधिकतम गेहूं समतुल्य उपज (38.51 क्विंटल/हेक्टेयर) उच्चतम लागत लाभ अनुपात (1:4.05) प्राप्त हुआ।

सारिणी–2 फसल पद्धतियों की प्रणाली दक्षता, उर्जा उपयोग और पोषक तत्व उपयोग दक्षता

क्र. सं.	फसल प्रणाली	फसल अवधि (दिन)	भूमि उपयोग दक्षता (प्रतिशत)	उत्पादकता (किग्रा./हे./दिन)	कुल उर्जा खपत (मेगाजूल/हे.)	कुल उर्जा उत्पाद(मेगाजूल/हे.)	ऊर्जा उपयोग अनुपात	उत्पादन हेतु पोषक तत्व उपयोग दक्षता (किग्रा./हे.)
1	धान–गेंहू	257	70.4	49.4	23651.3	220896	9.34	32.73
2	धान–आलू–प्याज	291	79.7	158.1	60669.5	186169	3.07	49.17
3	धान–गेंदा–राजमा	307	84.1	98.1	33583.0	147436	4.39	41.52
4	धान–पत्तागोभी–प्याज	308	84.4	78.5	39446.4	161039	4.08	44.76

मशीनों की सहायता से फसल की बुआई से कटाई तक के कार्य को कम समय में पूरा किया जा सकता है। मशीनीकरण ने फसल संघनता बढ़ाने के साथ–साथ कई लाभदायक फसल चक्रों के विकास में भूमिका निभाई है जैसे कि शून्य जुताई बुआई तकनीक से गेंहू, दलहन, तिलहन की बुआई समय से की जा सकती है जिससे पैदावार में वृद्धि दर्ज की गई है। इसी प्रकार उंची क्यारियों का मशीनों द्वारा निर्माण कर विभिन्न प्रकार की सब्जियों की बुवाई/रोपाई इन क्यारियों में होने से उत्पादन में वृद्धि होती है। जिससे बहुलाभदायी फसल प्रणालियों को विकसित करने में मदद मिली है। जैसे –लोबिया–टमाटर–भिण्डी, मक्का–आलू–टमाटर एवं लोबिया–मिर्च–गेंहू इत्यादि।

कृषि का उद्देश्य प्रति इकाई कृषित भूमि पर अधिक उपज लेना है। एक कृषि वर्ष में एक से ज्यादा फसलें ली जाय इसके लिए किसानों को अपने फसल प्रणाली में कम अवधि वाली अधिक फसलों का समावेश करना चाहिए। भूमि विशेष के अनुसार एवं संसाधनों की उपलब्धता के अनुरुप सब्जियों का चुनाव किया जा सकता है। सब्जियों को मिश्रित खेती, अन्त फसली खेती अथवा एकल खेती सभी में आसानी से व्यवस्थित किया जा सकता है। सघन फसल पद्धति में उत्पादन क्षमता को बनाये रखने के लिए उचित उर्वरक प्रबन्धन की आवश्यकता है। अतः विभिन्न फसलों द्वारा मिट्टी से ग्रहण की जाने वाली पोषक तत्वों की मात्रा की जानकारी होनी चाहिए और इसी आधार पर फसल पद्धति में उर्वरकों प्रयोग किया जाना चाहिए। कई बार एक फसल में उपयोग की गई उर्वरक के अवशेष खेत में रह जाते हैं जिसे अगले फसल द्वारा उपयोग में लिया जा सकता है। जैसे कि भिण्डी और बैंगन के अवशेष खाद को मूली एवं पालक द्वारा उपयोग कर लिया जाता है। इसी प्रकार आलू की फसल के अवषेष नत्रजन एवं पोटाश को प्याज की फसल द्वारा उपयोग किया जाता है। फास्फेट खाद का मिट्टी में स्थिरीकरण

सारिणी–3 उपज और विभिन्न सब्जी आधारित फसल अनुक्रम की लाभप्रदता

फसल अनुक्रम	उपज कु./हे.			गेहूं बराबर उपज (टन/हेक्टेयर)	लागत लाभ अनुपात
	खरीफ	रबी	जायद		
मक्का–गेहूं–ककड़ी	180.0	47.60	130.0	17.16	1:2.86
मक्का–मटर–करेला	185.5	83.10	145.0	23.28	1:2.91
मिर्च–गेहूं–लोबिया	130.0	50.15	87.48	38.51	1:4.05
भिंडी–आलू–नेनुआ	94.0	212.19	79.44	18.53	1:2.47
लोबिया–टमाटर–लौकी	85.0	174.38	139.50	22.90	1:2.29
लोबिया–गेहूं– लोबिया	90.0	49.38	80.73	16.93	1:1.99
मक्का–मटर+गेहूं–लोबिया	210.0	70.06, 34.72	90.50	19.63	1:3.45

सारिणी–5 अन्तः एवं रिले फसल पद्धति में उत्पादकता एवं आर्थिक लाभ

फसल पद्धति	आलू उपज	अन्तः फसल	रिले फसल	आलू बराबर	खेती की	कुल आमदनी	उद्ध लाभ	लागत लाभ
	(कु./हे.)	उपज (कु./हे.)	उपज (कु./हे.)	उपज (कु./हे.)	लागत (रु./हे.)	(रु./हे.)	(रु./हे.)	अनुपात
आलू+मूली (1:2)–लौकी	163.48	142.26	326.24	538.28	92476	269141	176665	2.91
आलू+मूली (1:2)–नेनुआ	163.48	142.26	138.36	498.67	94745	249333	154588	2.63
आलू+मूली (1:2)–टमाटर	163.48	142.26	117.46	559.19	101164	279597	178433	2.76
आलू+मूली (1:1)–लौकी	184.93	98.89	391.11	576.93	90476	288464	197988	3.19
आलू+मूली (1:1)–नेनुआ	184.93	98.89	155.30	512.52	92745	256260	163515	2.76
आलू+मूली (1:1)–टमाटर	184.93	98.89	125.49	565.22	99164	282608	183444	2.85
आलू+मूली+प्याज (1:1:1)–लौकी	180.28	88.85 45.06	347.27	601.28	100476	300638	200162	2.99
आलू+मूली+प्याज (1:1:1)–नेनुआ	180.28	88.85 45.06	140.37	548.05	102745	274026	171281	2.67
आलू+मूली+प्याज (1:1:1)–टमाटर	180.28	88.85 45.06	128.17	631.07	109164	315534	206370	2.89
आलू+प्याज (1:2)–लौकी	190.45	95.43	390.01	655.15	106476	327574	221098	3.08
आलू+प्याज (1:2)–नेनुआ	190.45	95.43	175.19	623.44	108745	311722	202977	2.87
आलू+प्याज (1:2)–टमाटर	190.45	95.43	120.42	632.15	115164	316074	200910	2.74
आलू+प्याज (1:1)–लौकी	210.04	69.24	406.72	646.20	98476	323098	224622	3.28
आलू+प्याज (1:1)–नेनुआ	210.04	69.24	196.23	634.79	100745	317394	216649	3.15
आलू+प्याज (1:1)–टमाटर	210.04	69.24	130.78	634.69	107164	317346	210182	2.96
आलू–लौकी	244.74	.	355.42	529.08	86476	264538	178062	3.06
आलू–नेनुआ	244.74	.	163.75	506.74	88745	253370	164625	2.86
आलू–टमाटर	244.74	.	120.58	534.13	95164	267066	171902	2.81

हो जाता है। इसलिए यह जरुरी है कि फास्फेट उर्वरकों का उचित प्रकार एवं मात्रा का उपयोग किया जाय। शोध में यह पाया गया कि धान–पत्तागोभी–टमाटर फसल चक्र में फास्फेट उर्वरक का सीधा, अवशेष एवं संयुक्त रुप से प्रभाव पड़ता है। फसल प्रणालियों में विभिन्न गहराई की जड़ों वाली फसलों को शामिल करने से पोषक तत्वों का पुर्नचक्रण होता है साथ ही फसल के पत्ता, जड़ तथा अवशेषों द्वारा कार्बनिक पदार्थ मृदा को प्राप्त होता रहता है। जिससे मिट्टी की भौतिक दशा में सुधार होने के साथ–साथ जल धारण तथा जैविक कार्बन की मात्रा में वृद्धि होती है। आमतौर पर वर्षा आधारित क्षेत्रों में दलहनी अथवा कम पानी चाहने वाली फसलों की संस्तुति की जाती है यह माना जाता है कि सब्जियां सिंचित क्षेत्रों के लिए ही उपयुक्त है परन्तु बहुत सारी

सब्जियां जैसे भिण्डी, सेम, लोबिया, ग्वार इत्यादि शुष्क क्षेत्रों के लिए बहुउपयोगी साबित हुई है। एक शोध में बारानी क्षेत्र में रागी एवं लोबिया की मिश्रित खेती से अधिकतम शुद्ध लाभ प्राप्त हुआ। इसी प्रकार सुर्यमुखी+लोबिया एवं मक्का+ग्वार तथा भिण्डी–लोबिया फसल पद्धतियों से अधिक उत्पादन

प्राप्त हुआ। प्रोटीन एवं उर्जा उत्पादन की दृष्टि से भी रागी+लोबिया की खेती लाभदायक है। शुष्क एवं बारानी क्षेत्र में सेम की फसल बहुपयोगी है क्योंकि इसमें अधिक उत्पादन के साथ सूखा सहनशीलता क्षमता है। इसी प्रकार शुष्क क्षेत्रों में बेर के बगीचें में लोबिया, भिण्डी, ग्वार की अन्तः फसल लाभदायक पायी गयी। मटर, पत्तागोभी, लोबिया, करेला, प्याज को अन्तःफसल के रुप में नीबू के बाग में सफलतापूर्वक खेती की जा सकती है। फसल में रोग, कीट एवं खरपतवार के प्रकोप को कम करने में फसल चक्रों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। एक ही फसल को किसी खेत में बार–बार उगाये जाने पर मिट्टी जनित रोग एवं कीड़ों का प्रकोप बढ़ जाता है लेकिन जब उचित फसल चक्र अपनाया जाय तो इससे बचा जा सकता है। टमाटर एवं बैंगन में बैक्टिरियल मुरझान नामक बिमारी का प्रकोप होता है। टमाटर को लोबिया मक्का–पत्तागोभी, भिण्डी–लोबिया– मक्का फसल चक्र के साथ खेती करने पर इस बिमारी का नियंत्रण किया जा सकता है। इसी प्रकार बैंगन के फसल को मक्का–भिण्डी–मूली, मक्का–लोबिया–मक्का, भिण्डी–लोबिया–मक्का तथा रागी–बैंगन–राजमा फसल चक्र के साथ खेती करने पर इस रोग पर नियंत्रण किया जा सकता है। मक्के के बाद टमाटर की फसल में जड़गांठ सूत्रकृमि का प्रकोप कम पाया गया। पत्तागोभी को टमाटर के साथ अन्तःफसल के रुप में लेने पर पत्तागोभी में सूत्रकृमि की संख्या में कमी दर्ज की गयी।

❖

प्याज की उन्नत खेती

डॉ. विजय महाजन
निर्देशक, प्याज एवं लहसुन अनुसंधान
निदेशालय, राजगुरुनगर, पुणे

प्याज (वानस्पतिक नाम–एलियम सेपा (एल)) की फसल प्राचीन काल से ली जा रही है। विभिन्न भाषाओं में प्याज को अलग–अलग नाम से जाना जाता है। जैस – हिन्दी मे प्याज, मराठी मे कांदा, गुजराती मे डुंगडी, बंगाली मे पलांदु, कन्नड मे ईरुली, मलयालम मे उल्ली, संस्कृत मे नृपकांदा, पलांदु, रक्तकादा, तमिल मे ईरा – वेंगायम, ईरुली, वेल्ला–वेंगायम, तेलगु मे निरुली, उल्ली, गडालु, अंग्रेजी में ओनियन आदि।

प्याज की किस्में– विभिन्न मौसम,

बाजार की माँग, संसाधन आदि हेतु किस्में विकसित करने के लक्ष्य से विगत 15 से 20 वर्षो से अनेक कृषि विश्वविद्यालयों तथा अनुसंधान संस्थानों में अनुसंधान कार्य किया जा रहा है। इसके फलस्वरूप लगभग 65 उन्नत किस्में विकसित की गयी है। प्याज के कुल क्षेत्रफल का 30–40% ही उन्नत किस्मों के अन्तर्गत है। शेष क्षेत्र में किसानों द्वारा स्वयं तैयार किया गया बीज बोया जाता है। स्वयं तैयार किए गये बीज में बीजोत्पादन के नियमों का पालन नही किया जाता है तथा प्रायः ये किस्में निम्न गुणवत्ता वाली होती हैं। इसके फलस्वरूप कम उत्पादन, दुफाड तथा तोर कन्दों की अधिकता होती है तथा भण्डारण क्षमता कम होती है। संस्तुति किस्मों के बीजों के समय पर उपलब्ध न होने के कारण किसान स्वयं बीज उत्पादन करते हैं या किसानों के पास उपलब्ध बीज बोते है। अच्छे बीज की उपलब्धता के लिए एक गाँव या एक पुरवे के किसान मिलकर एक ही किस्म के बीज उत्पादन कर सकते हैं। इससे अनुसंधान केन्द्रों से विकसित उन्नत किस्मों का प्रसार अधिक क्षेत्र में हो पायेगा। इनमें से कुछ संस्तुत किस्मों का विवरण निम्नलिखित है ।

रबी मौसम के लिए किस्मे–

1. भीमा शक्ति, भीमा किरण, अर्का निकेतन, एग्रीफॉउन्ड लाइट रेड, पूसा रेड, पूसा माधवी, भीमा राज, ल–२८, आदि

2. सफेद प्याज की किस्मे– भीमा श्वेता, फुले सफेद, पूसा वाइट राउंड, एग्रीफॉउन्ड वाइट, पंजाब सेलेशन, उदयपुर–१०२ आदि

जलवायु एवं मृदा– प्याज सुर्य प्रकाश व तापमान के प्रति बहुत संवेदनशील है । यह मुख्यतः एक शीतकालीन फसल है।

सामान्यतया प्याज की अच्छी बढ़ावार के लिए आरम्भ में 10 – 15^{0}C, कंद बढने के लिए 20–30^{0}C तथा निकालते समय 30–35^{0}C तापमान व 10–12 घण्टे सूर्य प्रकाश की आवश्यकता होती है। प्याज की खेती प्रतिकुल जलवायु में करने पर उपज पर भारी प्रभाव पडता है। प्याज की बढावार के समय यदि तापमान एकदम नीचे गिर जाता है तो उसमें कन्द के बजाय फूल आने लगते है। जो कि किस्मों पर निर्भर करता है। प्रकाश अवधि एवं मौसम के अनुसार प्याज की कई जातियाँ विकसित की गयी है। प्याज के अन्तर्गत क्षेत्रफल का 50–60 प्रतिशत इसी मौसम में लगाया जाता है। उत्तर भारत के सभी राज्यों में इसी मौसम में प्याज की खेती की जाती है। नवम्बर में लगायी फसल मार्च–अप्रैल में निकाली जाती है। इस समय पत्तियाँ अच्छी तरह सूखती है तथा अच्छी तरह सूखा हुआ प्याज अधिक समय भण्डारित होता है। रबी प्याज की रोपाई में जितनी देर होती है, उतनी ही उपज घटती है तथा प्याज का आकार छोटा रह जाता है। प्याज लगाने में अधिक देरी होने से यह जून में तैयार होता है और उस समय वर्षा होने से प्याज को नुकसान होता है तथा यह अच्छी तरह सूखता नही है फलस्वरुप भण्डारण में सड जाता है। रबी प्याज को अप्रैल से जून तक निकाला जाता है। इस दौरान अधिक उत्पादन होने से अगस्त माह तक बाजार भाव अच्छे नही मिलते है। इन परिस्थितियों में प्याज का भण्डारण करना लाभदायक रहता है । भण्डारण के लिए नवम्बर माह में की गयी रोपाई सर्वोत्तम होती है।

बीजदर– लगभग 8–10 कि.ग्रा. बीज एक हेक्टेयर में पौध के लिए आवश्यक है। पौधशाला में टपक प्रणाली में प्रयोग से 5–7 कि.ग्रा. बीज एक हेक्टेयर हेतु पर्याप्त होता है। लगभग 0. 05 हेक्टेयर क्षेत्र की पौधशाला 1 हेक्टेयर में रोपाई हेतु पर्याप्त है। बुवाई से पहले 2 ग्रा. / कि.ग्रा. बीज के दर से थिरम का उपयोग आर्द्र गलन (डैपिंग ऑफ) रोग से बचने में सहायता करता है। ट्रायकोडरमा विरीडी (1,250 ग्रा. / हे.) का उपयोग आर्द्र गलन से बचने एवं स्वस्थ पौध प्राप्त करने के लिए आवश्यक है।

साधारणतया एक वर्गमीटर क्षेत्र में 10 ग्राम बीज डाला जाता है। इस प्रकार 3 मीटर लम्बी तथा एक मीटर चौड़ी एक क्यारी में 30 ग्राम बीज लगता है।

रोपाई का तरीका– मध्यम तथा भारी मिट्टियों में हल से 15 से 20 सेंमी. गहरी

FAARD FOUNDATION फार्ड फाउण्डेशन
FOUNDATION FOR ADVANCEMENT OF AGRICULTURE AND RURAL DEVELOPMENT
कृषि प्रगति एवं ग्रामीण विकास संस्था
कृषि, ग्रामीण विकास, शिक्षा, पर्यावरण, स्वास्थ्य व उद्यमिता की दिशा में समर्पित

जुताई करनी चाहिए। इसके पश्चात 2–3 बार कल्टीवेटर चलाना चाहिए जिससे खेत में मिट्टी के ढेले टूट जाए एवं मिट्टी भुरभूरी हो जाय। भूमि की तैयारी से पूर्व खत में पिछली फसल के बचे हुए भाग, खरपतवार आदि इकट्ठा कर कंपोस्ट के गड्ढे में डाल देना चाहिए। दूब या मोथा आदि खरपतवारों को जड़ सहित निकालकर जला देना चाहिए। खेत में 20–25 टन अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद डालकर जमीन में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए । क्यारियों की लम्बाई तथा चौडाई भूमि के ढाल पर निर्भर करती है। सामान्यतया 1.5 से 2 मीटर चौड़ी तथा 4 से 6 मीटर लम्बी क्यारियाँ बनायी जानी चाहिए। क्यारियों की लम्बाई ढाल के विपरित होनी चाहिए। यदि भूमि में ढाल अधिक हो तो 1. 5 से 3 मीटर आकार की छोटी क्यारियाँ बनाना लाभदायक होता है

हमारे देश में पौध तैयार कर रोपाई की जाती है। जो कि यह एक पुरानी पद्धति है। इस विधि को पौधशाला में सीमित क्षेत्र में अच्छी देखरेख में तैयार किया जाता है। रबी मौसम में रोपाई समतल क्यारियों में की जाती है। समतल क्यारियों में मेढ़ विधि की अपेक्षा 30 प्रतिशत अधिक पौधे लगते है। इनमें पानी समान मात्रा में पहुंचता है तथा पौधों की वृद्धि समान होती है। साथ ही साथ खाद देने तथा निराई–गुड़ाई में भी सुविधा होती है। समतल क्यारियों में सिचाई के बाद रोपाई की जाती है। इससे लगाने में सुविधा रहती है परन्तु मजदूरों के पैरो से दबने के कारण जमीन सख्त हो जाती है।

पौधो के बीच 15x10 सेंमी. अन्तर रखना चाहिए। इस प्रकार 3x2 मीटर आकार की समतल क्यारियों में 400 पौधे लगाए जा सकते है। टपक या फुहार विधि में रोपाई से पूर्व 3–4 सेंमी. गहराई तक सिंचाई करने के बाद रोपाई करनी चाहिए। रबी मौसम में 50 से 55 दिन के पौधे रोपाई योग्य होते है । रोपाई के समय पौधों में गाँठें नही होनी चाहिए। पौधे उखाडने के पूर्व सिंचाई करनी चाहिए जिससे पौधों की जड़ें नही टूटती है। पौधों की जडों को बाविस्टिन या जैव उर्वरकों के घोल में उपचारित करने के बाद रोपाई करनी चाहिए।

आजकल फसलों में सिचाई के लिए टपक या फुहार विधि का प्रचलन बढ रहा है। इस विधि में सिचाई के लिए क्यारियाँ अलग तरीके से बनायी जाती है। इसके लिए ट्रैक्टरचलित मेड़ बनाने वाले यन्त्र द्वारा 120 सेंमी. चौडी तथा 10 से 15 सेंमी. उंची एवं 60 मीटर तक लम्बी क्यारियाँ बनायी जाती है।

पोषक तत्वों की आवश्यकता एवं प्रबन्धनः मिट्टी परीक्षण के आधार पर पोषक तत्वों को देना आवश्यक है । गोबर की खाद, हरी खाद तथा उचित फसलचक्र से अधिकांश सूक्ष्म तत्व पौधों को उपलब्ध हो जाते है। अपेक्षित प्याज उत्पादन के लिए 20 से 25 टन प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद जमीन में मिलाकर देनी चाहिए। कम सड़ी हुई गोबर की खाद से अनेक प्रकार की बीमारियाँ आ सकती है । नत्रजन को 2–3 सप्ताह के अन्तर पर थोडी–थोडी मात्रा में विभाजीत कर देने से अधिक फायदा होता है। प्याज की वृद्धि पूर्ण होने के बाद नत्रजन देने से प्याज तैयार होने में देरी होती है तथा दुफाड एवं तोर वाले प्याज अधिक होते है एवं भण्डारण में प्याज अधिक सडता है । नत्रजन का 50% रोपाई से पहले दिया जाना चाहिए। नत्रजन की संस्तुत मात्रा का एक चौथाई भाग रोपाई के 3–4 हप्ते बाद तथा शेष भाग रोपाई के 6–7 सप्ताह बाद देना चाहिए। फॉस्फोरस, पोटाश एवं गंधक की सम्पूर्ण मात्रा को एक बार ही रोपाई से पूर्व दिया जाना चाहिए। पोटाश से प्याज की भण्डारण क्षमता बढती है तथा आकर्षक रंग विकसित होता है। प्याज में अन्य फसलों की तुलना में गंधक की अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है। अब मिश्रीत उर्वरकों का प्रयोग होने लगा है जिनमे केवल नत्रजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश उपलब्ध होते है । इस कारण गंधक युक्त उर्वरकों का प्रयोग अलग से करना आवश्यक है । खाद तथा उर्वरकों की मात्रा, मिट्टी के प्रकार, फसल लगाने का मौसम, किस्म तथा खाद देने के तरीके पर निर्भर करता है। सामान्यतया 110:40:60:30 किग्रा NPKS के साथ जैविक खाद के बराबर 15 टन एफवाईएम और Azospirillum तथा फास्फोरस solubilizing जीवाणु/5 किग्रा./हे उर्वरकों की मात्रा संस्तुति की गई है। जैविक उर्वरक जो कि 75 कि.ग्रा./हे. नत्रजन के बराबर है (सड़ी हुई गोबर की खाद 15 ट./हे. या मुर्गी की खाद 7.5 ट./हे. या केंचुए की खाद 7.5 ट./हे.) अंतिम जुताई के समय डालना चाहिए। 45 से. मी. चौड़ी नाली के साथ 15 से.मी. ऊंचाई और 120 से. मी. चौड़ाई की उठी हुई क्यारियां (बीबीएफ) तैयार की जाती है जिससे उचित अंतर तथा संख्या घनत्व प्राप्त किया जा सके। यह तकनीक टपक और फव्वारा सिंचाई के लिए भी उपयुक्त है। प्याज की फसल को तांबा, लोहा, बोरान आदि सूक्ष्म तत्वों की आवश्यकता होती है। यह सूक्ष्म पोषक तत्व प्याज की भण्डारण क्षमता को बढ़ाते है। प्याज में रोपाई से पूर्व क्यारियों में ऑक्सि–फ्लोरोफेन 23.5% इसी (1.5–2.0 मि.लि.)/पेंडीमिथालीन 30% इसी (3.5–4.0 मि. लि.) प्रतिलीटर की दर से छिड़काव

करना चाहिए। खरपतवार के छिडकाव के लिए एक विशेष प्रकार के नोजल का प्रयोग किया जाता है। जिससे छिड़काव अच्छा होता है। छिड़काव के तुरन्त बाद रोपाई कर सिचाई करनी चाहिए। यदि रोपाई पंक्तियों में की गयी हो तो रोपाई के बाद पंक्तियों के मध्य खरपतवारनाशक का प्रयोग किया जा सकता है। प्याज में 2–4–डी या ग्लासिल जैसे खरपतवार नाशकों का प्रयोग नही करना चाहिए। खरपतवारनाशकों के प्रयोग के बाद केवल एक ही गुड़ाई की आवश्यकता होती है। रोपवाटिका में बीज बुवाई के बाद भी तृणनाशकों का प्रयोग नही करना चाहिए ।

सिंचाई एवं जल प्रबन्धन– प्याज की जड़ें मिट्टी में 10 से 15 सेंमी. की गहराई तक फैलती है और किसी भी अवस्था में 20 सेंमी. से गहरी नही जाती है। इसलिए प्याज की फसल की सिचाई करते समय 15 सेंमी. से अधिक गहराई तक पानी देने की आवश्यकता नही होती है। प्याज की फसल को शुरुआती काल में अधिक पानी की आवश्यकता होती है। रोपाई के तुरन्त बाद सिचाई की जाती है । इसके पश्चात नयी जड़े विकसित होने तक खेत में पर्याप्त नमी होना आवश्यक है। इसलिए रोपाई के बाद की सिचाई के दो–तीन दिन के बाद सिचाई की आवश्यकता होती है। एक बार पौधों के स्थापित हो जाने के बाद पानी की आवश्यकता कम हो जाती है । परन्तु जैसे–जैसे पौधों की वृद्धि होती है। उनकी पानी की आवश्यकता बढ़ने लगती है। पौधों में गाँठ बनना आरम्भ होने से कन्दों के पूर्ण विकास तक (रोपाई के 60 से 100 दिन तक) नियमित रूप से सिचाई की आवश्यकता होती है। इस अवधि में पानी की कमी होने से उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पडता है। सिचाई का अन्तराल फसल की वृद्धि की अवस्था, लगाने का मौसम, मिट्टी का प्रकार आदि बातों पर निर्भर करता है। साधारणतया रोपाई के तुरन्त बाद एक सिचाई की जाती है। इसके बाद रबी मौसम (नवम्बर से जनवरी) में 10 से 12 दिन बाद सिचाई की जाती है और साधारणतया 12 से 15 सिचाईयाँ की जाती है। देर से रोपाई (फरवरी से मई) मे 7 से 8 दिनों के अन्तराल पर सिचाई की जाती है। इस अवधि मे 15 से 20 सिचाईयों की जरुरत होती है । कन्दो की वृद्धि पूर्ण होने पर पत्तियाँ पीली पड़ने लगती है तथा पौधे गर्दन के पास मुड़कर गिरने लगते है। कन्दों को उखाड़ने से 15 से 20 दिन पहले सिचाई बन्द कर देनी चाहिए। इससे कन्दों के परिपक्व होने में सहायता मिलती है। फलस्वरुप कन्द सुदृढ़ होते है, शल्क सूख जाते है तथा उखाड़ते समय निकलते नही है। खरीफ मौसम में वर्षा की मात्रा तथा मिट्टी की किस्म के अनुसार सिचाई करनी चाहिए।

प्याज की फसल को सीधे पानी न देने के लिए टपक और फुहार सिचाई विकसित की गयी। रबी फसल के पकते समय पानी की कमी के आसार रहते है। अतः टपक या फुहार सिचाई से सिंचित क्षेत्र बढाया जा सकता है । सिचाई की

इस पद्धति से प्रमुख लाभ निम्नांकित है ।
1. प्याज की एक फसल को नालियों से पानी देने मे लगभग 75 से 80 हेक्टेयर सेंमी पानी की आवश्यकता होती है। जबकि टपक या फुहार सिचाई में पानी की 40 से 50% तक बचत होती है तथा इस विधि में 40 से 50 हेक्टेयर सेंमी पानी की आवश्यकता होती है साथ ही उत्पादन में 20 से 30% तक की वृद्धि होती है। कन्दो की एक समान वृद्धि होती है और बिक्री योग्य कन्द अधिक मिलते है। जमीन में सतत नमी रहने से वह भुरभुरी रहती है तथा प्याज उखाडने में आसानी होती है। टपक सिचाई में पानी के साथ उर्वरक देने से मजदूरी की बचत होती है तथा उर्वरक को कई बार देने से उर्वरक अवशोषण क्षमता बढती है। साथ ही साथ 20 से 30% उर्वरक की बचत होती है। सीमित क्षेत्र में सिचाई होने से खरपतवार नियन्त्रण आसान होता है एवं खरपतवार कम निकलते है। नाली से सिचाई करने से एक एकड प्याज की फसल के लिए 15 मजदूर दिवस लगते है। जबकि टपक या फुहार विधि में 1 से 2 घण्टा प्रति दिन चलाने के कारण किसी प्रकार के मजदूर की आवश्यकता नही होती। टपक सिचाई में पानी देने के लिए उस स्थान पर जितना वाष्पीकरण होता है उतनी मात्रा मे पौधों को पानी उपलब्ध करना आवश्यक होता है। पानी की मात्रा जमीन का प्रकार, वातावरण, फसल लेने का मौसम, लगाने की दूरी आदि बिन्दुओ पर निर्भर करता है। मोटे तौर पर प्याज में यदि हर दिन पानी नहीं दिया जा सकता तो भी हर तीसरे चौथे दिन इस अवधि मे जितना वाष्पीकरण होता है उतनी पानी की मात्रा देना चाहिए।

❖

मधुमक्खी के आर्थिक महत्त व उन पर लगने वाले परजीवी एवं उसका समाधान

डॉ. अखिलेश कुमार सिंह
सह प्राध्यापक– कीट विज्ञान विभाग
रानी लक्ष्मीबाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झांसी

मधुमक्खियाँ प्रकृति की सबसे मेहनती और उपयोगी जीवों में से एक है। यह मौन उत्पादों के अलावा फसल की उत्पादकता बढ़ाने, जैव विविधता एवं पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में भी अहम योगदान देती हैं। मधुमक्खियाँ फूलोंके पुंकेसर से परागकण एकत्र कर उन्हें फूलों के वर्तिकाग्र तक पहुँचाती हैं जिससे परागण होता है। इससे फलों एवं सब्जियों और अनाज की उत्पादकता बढ़ जाती है। वनस्पति जगत के लगभग 66 प्रतिशत पुष्प धारण करने वाले पौधों में परागण मधुमक्खियों द्वारा होता है। एक आँकड़े के अनुसार विश्व में परागणकर्ता द्वारा किए गए परागण का वार्षिक खर्च अमेरिकी मुद्रा में लगभग 200 अरब डालर है। उपर्युक्त आँकड़ा हमारे जीवन में परागण के लिये उत्तरदायी मधुमक्खियों की भूमिका के महत्व को बखूबी दर्शाता है। परागणकर्ता की अनुपस्थिति में परागण की कमी के कारण फसल की उत्पादकता एवं गुणवत्ता दोनों में कमी आ जाती है। परागणकर्ता जंतुओं में मधुमक्खियों का स्थान सबसे महत्वपूर्ण है, जो कि पादप जगत को निःशुल्क परागण की सुविधा प्रदान कर अप्रत्यक्ष रूप में संपूर्ण प्राणी जगत को लाभ पहुँचाती हैं। विकसित देशों में औद्यानिक एवं उच्च आय प्रदान करने वाली पर परागण समुदाय की फसलों में परागण बढ़ाने के लिए मौनगृह की उपयुक्त संख्या रखने से पर परागण बढ़ता है और इससे फसल की उत्पादकता बढ़ जाती है। हमारे देश में भी जम्मू कश्मीर व हिमाचल प्रदेश में सेब के बगीचे में किराये पर मौनगृह रख कर मधुमक्खियों से परागण संपादित कर फसल की उत्पादकता बढ़ाया जा रहा है।

पराग वाहक के रूपमें मधुमक्खी का महत्वःपुष्प के पुंकेसर से परागकण को वर्तिकाग्रतक के स्थानान्तरित करने की क्रिया को 'परागण' कहते हैं। परागण में मधुमक्खियाँ अहम भूमिका निभाती हैं। यह सर्वविदित है कि परागण के बाद ही पुष्प से फल एवं बीज का निर्माण संभव हो पाता है। अधिकतर परपरागण समुदाय की फसलों में परागण के लिए मधुमक्खी सर्वश्रेष्ठ परागणकर्ता साबित हुई है। मधुमक्खियों की विशेष शारीरिक बनावट व पौधों पर लगे फूलों के साथ इनके लाभकारी व्यवहार के कारण ये अन्य परागणकर्ता कीटों की तुलना में अधिक लाभकारी होती हैं। मधुमक्खी के एक अच्छे परागणकर्ता होने के गुण निम्नलिखित हैः

1. इनके शरीर पर बहुतायत मात्रा में बालों की संख्या तथा इनके पैरों परपरागकण को फँसाने के लिए सघन बाल होत हैं जिन्हें पराग टोकरी कहते हैं। ये पराग टोकरियाँ अधिक से अधिक परागकणों को फँसाने व उन्हें पुष्पों के वर्तिकाग्र तक पहुँचाने में सहायक होती हैं।

2. मधुमक्खी फूलों पर ज्यादा समय बिताती है और साथ में ही एक निश्चित समय में यादे फूलों पर प्रागण करती है जो एक उत्तम परागणकर्ता का गुण है।

3. मधुमक्खी का छोड़ कर अन्य सभी परागण संपादित करने वाले कीट वर्ष में एक बार कुछ समय के लिए शीतस्वापन के लिए जाते हैं, परन्तु मधुमक्खी पूरे वर्ष अनवरत् बिना शीतस्वापन में गए पौधों को निःशुल्क परागण सुविधा प्रदान करती है।

उपरोक्त लक्षण उत्तम पराग वाहक कीटों के विशिष्ट गुण लक्षण हैं। मधुमक्खी पालन, कृषि के स्थायी व समग्र विकास का उपयुक्त साधन है। कृषि के चार मुख्य निवेश–भूमि, श्रम, पूँजी एवं प्रबंधन माने जाते हैं। इन चार निवेशों के अलावा पाँचवाँ निवेश मधुमक्खी पालन को माना जा रहा है, जो कि कृषि व बागवानी में फसलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता बढ़ाने में उत्प्रेरक के रूप में काम करेगा। कुछ कृषि वैज्ञानिक भविष्य के द्वितीय हरित क्रान्ति के लिए फसलो में समृद्ध परागण से भी आशान्वित हैं, और इस परागण की प्रक्रिया में मधुमक्खी को अहम् माध्यम मानते हैं।

भारतवर्ष की जनसंख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। सभी जानते हैं कि जनसंख्या वृद्धि का भोजन की आवश्यकता से सकारात्मक संबंध है। हमारा देश प्रगतिशील देश होने के कारण, विकास के नाम पर खेती योग्य भूमि का नई सड़कों, औद्योगीकरण व रहने के लिए मकान बनाने में उपयोग कर रहा है, जिससे प्रति व्यक्ति खेती योग्य भूमि घटती जा रही है, जबकि कुल भोजन की आवश्यकता दिन–प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। इस बढ़ी हुई माँग की आपूर्ति के लिए हमें फसल की उत्पादकता बढ़ानी होगी। इसके लिए हम सभी द्वितीय हरित क्रांति की उम्मीद से इस चुनौती को पूरा करने के पथपर अग्रसर हैं। परागण के साथ–साथ मधुमक्खी हमें मौनगृह उत्पाद जैसे शहद, मोम, शाही जेली, परागकण, राल एवं मौनविश भी देती है जो बहुत उपयोगी है।

मधुमक्खी के उत्पादों के आर्थिक महत्त्वः

1. शहदः शहद श्रमिक मधुमक्खियों द्वारा तैयार किया गया मीठा पदार्थ है, जिसे मधुमक्खी, पुष्प द्वारा स्रावित होने वाले मीठे रस से बनाती है। पुष्प द्वारा स्रावित मीठे रस को मधुमक्खियाँ अपने आहारनाल में एकत्र करती हैं एवं पुनः उस मौनगृह अथवा छत्ते में जाकर निकालती हैं। तत्पश्चात् इसमें उपस्थित अधिक पानी की मात्रा को अपने पंखों से हवा देकर वाष्पीकरण कराती है और जब यह 20 प्रतिशत से कम हो जाता है तो इसे मोम से बंद कर देती हैं। मधुमक्खियों द्वारा तैयार किया गया शहद पोषण और औषधीय गुणों से भरपूर होता है। यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था और किसानों के लिए आय का प्रमुख स्रोत है ।

2. मोमः छत्ता बनाने के लिए 12–18 दिन पुरानी श्रमिक मधुमक्खियाँ अपने उदर में स्थित मोमग्रन्थि से मोम स्रावित करती हैं और इसे अच्छी तरह गूथने के बाद छत्ता बनाती हैं। मोम मधुमक्खी पालन उद्योग का एक महत्वपूर्ण प्रतिफल है, जिसका उपयोग सौन्दर्य प्रसाधन, दवाओं, बिजली इंसुलेटर, पालिश व मधुमक्खी के छत्तों का आधार बनाने में होता है।

3. राज अवलेहः इसे शिशु भोजन भी कहते हैं, यह 6–12 दिन पुरानी श्रमिक मधुमक्खी के हाइपोफैरेन्जियल ग्रन्थि द्वारा स्रावित होता है। शाहीजेली में प्रचुर मात्रा में प्रोटीन, शर्करा, वसा, खनिज व विटामिन्स पाए जाते हैं। राज अवलेह में लगभग 50–70 प्रतिशत पानी, 10–18 प्रतिशत प्रोटीन, 10–16 प्रतिशत शर्करा और 3–8 प्रतिशत वसा होता है। प्रोटीन भाग में मुख्य रूप से MRJP (Major Royal Jelly Proteins)मुख्य राज अवलेह प्रोटीन शामिल होते हैं। प्रयोगशाला और क्लिनिकल अध्ययनों में रॉयल जेली के एंटीऑक्सिडेंट, एंटीइंफ्लेमेटरी, एंटी माइक्रोबियल और संभावित एंटी ट्यूमर होने के गुण मिले हैं।

4. परागकणः पौधों के पुष्पों मे स्थित परागकोष द्वारा उत्पन्न प्रजनन की यह छोटी नर इकाई है। पोषण की दृष्टि से इसमें प्रचुर मात्रा मे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, खनिज, व विटामिन्स पाए जाते हैं। आंशिक रूप से किण्वित परागकण, जो छत्ते के विभिन्न इकाइयों में संग्रहित होते हैं, उन्हें 'बीब्रेड' कहते है, इसका उपयोग विभिन्न प्रोटीन एवं दवाओं को बनाने में किया जाता है।

5. रालः पौधों से गोंद स्रावित होता है, जिसे मधुमक्खियाँ एकत्र कर इसके साथ कुछ मोम की मात्रा मिलाकर राल बनाती हैं। इसका प्रयोग मधुमक्खियाँ मौनगृह के अन्दर की दरार को बंद करने के लिए करती हैं, जिससे मौनगृह में हानिकारक कीट तथा गर्म एवं ठंडी हवाओं का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है। इसका उपयोग सौन्दर्य प्रसाधन व कुछ दवाओं को बनाने में किया जाता है।

6. मौनविश : यह श्रमिक मधुमक्खियों के डंक मारने पर उनके विशग्रन्थि से निकलता है। इसे मधुमक्खियाँ अपने सुरक्षा व बचाव के लिए प्रयोग करती है। मौनविश का उपयोग एपिथिरैपी के लिए किया जाता है। इसे गठिया के साथ–साथ अन्य कई बीमारियों के उपचार में भी प्रयोग किया जाता है। मौनविश में एंटी–इंफ्लेमेटरी, एंटी–माइक्रोबियल गुण दिखा है, प्री–क्लिनिकल अध्ययनों में इसके मेलिट्टिन यौगिक में एंटी–कैंसर गुण मिले हैं।

7. मौन पालन से मिलने वाला रोजगारः भारतवर्ष की जनसंख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रहीहै, जिसके कारण रोजगार की आवश्यकता भी बढ़ती जा रही है । मधुमक्खी पालन के द्वारा लोगों को रोजगार प्रदान किया जा सकता है। विशेषतया ग्रामीण अंचल में मधुमक्खी पालन के द्वारा लोगों को प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्राप्त होता है। मधुमक्खी पालन में उपयोग होने वाले उपकरण बनाने, मौनपालन उत्पादों के प्रसंस्करण, डिब्बाबन्दी और विपणन जैसे कार्यों में लोगों को रोजगार के अवसर प्रदान किये जा सकते है।

विश्व में मधुमक्खियों की सात प्रजातियाँ पाई जाती हैंः जबकि भारत में चार प्रजातियाँ पाई जाती हैंः एपिस मेलिफेरा, एपिस सेरना, एपिस डारसाटा एवं एपिस फ्लोरिया। इन प्रजातियों में से केवल दो प्रजातियाँ एपिस मेलिफेरा व एपिस सेरना को ही मौनगृहों में पाला जा सकता है। इनमे एपिस मेलिफेरा मधुमक्खी पालन के लिए सबसे उपयुक्त प्रजाति है। विश्व में लगभग 100 लाख पालतू मौनगृह हैं, वहीं भारत में इनकी संख्या केवल 19.34 लाख है। इसी बीच कुछ चौंकाने वाले एवं निराशाजनक आँकड़े भी सामने आए हैं, जिसमें सबसे महत्वपूर्ण पालूत मौनवंशों की संख्या का तेजी से घटना है। इसका कारण कालोनी कोलैप्स डिसऑर्डर (सीसीडी) सिंड्रोम है। यह विभिन्न प्रकार की बीमारियाँ, हानिकारक कीट, हानिकारक मकड़ी व कुछ अन्य हानिकारक कारकों से होता है।विश्व एवं भारतमें मधुमक्खी का सबसे हानिकारक परजीवी वर्रोआडेस्ट्रक्टर माइट है। किन्तु भारत में गत वर्ष से छोटा छत्ताभृंग (Small hive beetle) जिसका वैज्ञानिक नाम ऐथीना टुमिडा है, प्रमुख है। इस कीट से भारतीय मधुमक्खी पालक बहुत परेशान है और नया परजीवी होने के कारण इसको जानना एवं इसका प्रबंधन भी कठिन हो रहा है।

वर्रोआडेस्ट्रक्टर परजीवी माइटः

मधुमक्खियों में वर्रोआडेस्ट्रक्टर नामक परजीवी माइट को सबसे खतरनाक परजीवी माना जाता है। यह माइट लाल भूरे रंग की होती है जो छत्ते में मौजूद वयस्क और लार्वा दोनों पर परजीवी बनकर रहता है एवं उनके शरीर पर चिपककर उनके रक्त को चूसता है, जिससे मधुमक्खियाँ कमजोर हो जाती है एवं उनकी प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है। विश्वभर में मधुमक्खीपालन उद्योग के लिए यह माइट एक गंभीर चुनौती बन चुका है। मादा माइट शिशुकोष में प्रवेश कर अंडे देती है एवं नर शिशुकोष को प्राथमिकता देती है। नर शिशुकोष में विकास अवधि अधिक होने के कारण माइट तेजी से बढ़ते हैं। वयस्क मधुमक्खियाँ उड़ान के दौरान संक्रमण को दूसरे छत्तों तक फैला देती हैं। उपयोग किए गए पुराने फ्रेम भी संक्रमण का स्रोत बनते हैं।

परजीवी लगने के लक्षणः

1 वर्रोआमाइट के द्वारा फैलाये गए डीफॉर्म्डविंग वाइरस के कारण पंख विकृत हो जाता है।

वर्रोआमाइट

वर्रोआमाइटसंक्रमित मधुमक्खी

वर्रोआमाइट से डीफॉर्म्डविंग

FAARD FOUNDATION फार्ड फाउण्डेशन
FOUNDATION FOR ADVANCEMENT OF AGRICULTURE AND RURAL DEVELOPMENT
कृषि प्रगति एवं ग्रामीण विकास संस्था
कृषि, ग्रामीण विकास, शिक्षा, पर्यावरण, स्वास्थ्य व उद्यमिता की दिशा में समर्पित

2 नवजात मधुमक्खियाँ कमजोर या अपंग हो जाती है एवं मधुमक्खियों का अस्वाभाविक रूप से चलना या उड़ान में अक्षम हो जाती है।

3 वयस्क मधुमक्खियों का वजन कम जाता है और उनकी आयु घट जाती है एवं छत्ते में मधुमक्खियों की जनसंख्या में धीरे–धीरे कम हो जाती है।

यदि समय पर नियंत्रण न किया जाए तो पूरा कॉलोनी समाप्त हो सकती है।

वर्रोआमाइट प्रबंधनः

1 नर शिशुकोष को नष्ट कर देना चाहिए।

2 संक्रमित फ्रेम को साफ करना चाहिए एवं नए और स्वच्छ उपकरणों का उपयोग करना चाहिए।

3 हाइजेनिकबीलाइन मधुमक्खी का उपयोग करना चाहिए जो संक्रमित ब्रूड को खुद ही हटा देती हैं।

4 रसायनों का उपयोग सावधानी से करें ताकि शहद में अवशेष न आएं और मधुमक्खियों पर दुष्प्रभाव कम हो।

5 फोरमिक एसिड ब्रूड कोशों में भी प्रवेश कर माइट को मारता है।

6 ऑक्सेलिक एसिड ब्रूड–रहित अवस्था में अत्यंत प्रभावी होता है इसे ड्रिप यावेपोराइजेशन विधि से दिया जाता है।

7 फ्लुवालीनेट अत्यंत प्रभावी लेकिन इसे साल में केवल 1–2 बार ही उपयोग करना चाहिए।

ऐथीनाटुमिडभृंग

लार्वासंक्रमितछत्ता

छत्तामेंभृंग

मिट्टीमेंकोष

ऐथीनाटुमिडा (छोटा छत्ता भृंग) परजीवी माइटः

ऐथीनाटुमिडा मधुमक्खी का एक गंभीर कीट–परजीवी है। यह कीट विशेष रूप से फिस मेलीफेरा प्रजाति की मधुमक्खियों के लिए हानिकारक है। यह परजीवी सर्वप्रथम दक्षिण अफ्रीका में चिन्हित किया गया था, लेकिन अब यह विश्व के कई देशों में फैल चुका है।कुछ समय पहले ही यह भारत में भी बांग्लादेश के रास्ते पहुँच चुका है। इस परजीवी की मादा बीटल छत्ते की दरारों एवं शिशुकोशों में अंडे देती है। इस परजीवी का लार्वा एवं वयस्क दोनों ही अवस्थाएं हानिकारक होते हैं। इसका लार्वा छत्तों के अंदर सुरंग बनाकर शहद, पराग और मधुमक्खी के शिशु को खाते हैं एवं शहद को गन्दा कर देते हैं शहद एवं परागकण को दूषित कर देता है जिससे उसमे दुर्गंध उत्पन्न होने लगाती है। इसकी गन्दगी से संक्रमण बढ़ने लगता है और पूरा छत्ता खराब हो जाता है जिससे मधुमक्खियाँ छत्ता छोड़ने पर मजबूर हो जाती हैं। वयस्क बीटल भी मधुमक्खियों के छत्तों में प्रवेश कर शहद, पराग एवं शिशु को खाते हैं। लार्वा पूर्ण विकसित होने पर वे छत्ते से बाहर निकलकर कालोनी के पास ही मिट्टी में २० सेंटीमीटर की गहराई तक जाकर कोष बनाने है। कोष से निकलने के बाद वयस्क बीटल बनते हैं, जो फिर से छत्ते में घुसकर अंडे देते हैं और अपना जीवन चक्र दोहराते है। इस कीट का कोष अवस्था सबसे कमजोर कड़ी है।

ऐथीनाटुमिडा (छोटा छत्ता भृंग) का प्रबंधनः

मधुमक्खी वंश को स्वच्छ एवं मजबूत रखना चाहिए। मधुमक्खी के छत्तों का नियमित निरीक्षण एक प्रभावी उपाय माना जाता है।

गंभीर संक्रमण की स्थिति में तलपट की सफाई, संक्रमित फ्रेम निकलकर नष्ट कर देना चाहिए। मधुमक्खी कालोनी में नमी अधिक होने से रोकना चाहिए, तथा भृंगको जाल–आधारित ट्रैप में पकड़ कर नियत्रित कर सकते है। जिस जगह इनका प्रकोप हो वहां पर गहरी जुताई कर इनके कोष को मिट्टी में नष्ट किया जा सकता है।

निष्कर्ष : दिन–प्रतिदिन बढ़ती जनसंख्या के साथ–साथ हमारी भोजन की माँग भी बढ़ती जा रही है, जबकि विकास के नाम पर प्रतिव्यक्ति खेती योग्य भूमि घटती जा रही है, मधुमक्खी पालन व उनके द्वारा होने वाले फसल परागण जैसी अति लाभकारी क्रिया को बढ़ावा देकर विभिन्न फसलों की उत्पादकता व उत्पादों की गुणवत्ता को बढ़ाया जा सकता है। इसके साथ–साथ मौन पालन के विभिन्न उत्पाद जैसे–शहद, मोम, मौनविश, प्रोपॉलिश, शाहीजेली और परागकण की बिक्रीकर के आय को बढ़ाया जा सकता है। इससे ग्रामीण अंचल में सुनहरे रोजगार के अवसर भी प्राप्त होते हैं। मधुमक्खियों पर लगने वाले परजीवी और उनकी की घटती संख्या चिंता का विषय है जिसे उपयुक्त प्रबंधन करके उनका संरक्षण किया जा सकता है। उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए कृषि के सतत् व समग्र विकास में मधुमक्खी पालन की संभावनाओं से इन्कार नहीं किया जा सकता है।

उत्तर प्रदेश में राई–सरसों खेती की वर्तमान स्थिति एवं संभावनाएं

डॉ. पी. के.राय
निदेशक, राष्ट्रीय जैविक स्ट्रेस प्रबंधन संस्थान, रायपुर
एवं पूर्व निदेशक भारतीय सरसों अनुसंधान संस्थान, भरतपुर
प्रज्वल राय
शोधछात्र, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नईदिल्ली

तिलहनी फसलें ऊर्जा का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत हैं। देश की बढ़ती आबादी की ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये खाद्य तेल की मांग दिन प्रतिदिन बढ़ रही है। वर्तमान में देश में कुल खाद्य तेल की आवश्यकता लगभग 26 मिलियन टन की है जिसका एक बड़ा हिस्सा, लगभग 16 मिलियन टन, आयात से पूरा किया जा रहा है। देश में प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोतों से मिलाकर खाद्य तेल का कुल उत्पादन लगभग 11 मिलियन टन है (वर्ष 2024–25)। प्राथमिक स्त्रोत में कुल 7 तिलहनी फसलें; सोयाबीन, राई–सरसों, मूंगफली, सूरजमूखी, तिल,कुसुम एवं राम कुसुम शामिल हैं। देश में तिलहन उत्पादन में कुल लगभग 30 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल (वर्ष 2024–25) है जिसके और अधिक बढने की संभावना कम ही है। देश में तिलहन उत्पादन बढ़ाने का एकमात्र तरीका उत्पादकता बढ़ाना है। फसलों, विशेषकर तिलहनी फसलों के उत्पादन एवं उत्पादकता बढाने में पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, गुजरात ने जिस तरह से सफलता प्राप्त की है वैसी ही सफलता कम उत्पादन एवं उत्पादकता वाले राज्यों; मध्यप्रदेश, उडीसा, पश्चिम बंगाल, बिहार और पूर्वोत्तर राज्यों के अलावा पूर्वी उत्तर–प्रदेश में भी प्राप्त करने की आवश्यकता है तभी हम तिलहनी फसलों की उत्पादकता देश स्तर पर बढ़ा पायेंगे। भारत में उगाई जाने वाली 7 वार्षिक खाद् तिलहन फसलों में राई, सरसो की हिस्सेदारी देश के कुल क्षेत्रफल का लगभग एक–चौथाई और कुल तेल उत्पादन का एक–तिहाई है। सिमांत और छोटे किसानो के लिये राई–सरसों की खेती आय का एक प्रमुख स्रोत हो सकता है। राई–सरसों फसल को पानी की एवं उर्वरकों की कम आवश्यकता होती है। अतः यह फसल विभिन्न फसल प्रणालियों के लिये उपयुक्त और अनुकूल है। इस लेख में उत्तर–प्रदेश में राई–सरसों की खेती की वर्तमान स्थिति के साथ–साथ उन्नत उत्पादन तकनीकी पर प्रकाश डालने की कोशिश की गई है जिससे प्रदेश के सीमांत एवं छोटे किसान राई–सरसों की खेती करके अधिक से अधिक लाभ प्राप्त कर सकें।

वर्ष 1984–85 तक उत्तर–प्रदेश 47. 49 प्रतिशत् क्षेत्रफल एवं 42.66 प्रतिशत उत्पादन के साथ–साथ राई–सरसों उत्पादन में अग्रणी राज्य था। अनाजों, विशेषकर गेहूँ एवं चावल की बढ़ती मांग, इन फसलों में उच्च उपज देने वाली उर्वरक–अनुकूल किस्मों के विकास, सुनिश्चित खरीद और न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) में वार्षिक वृद्धि के कारणराज्य में बड़े पैमाने पर चावल–गेहूँ, फसल प्रणाली अपनायी गयी। दूसरी ओर, उच्च उपज देने वाली किस्मों/शंकर किस्मों, समतुल्य उत्पादन और सरंक्षण तकनीकों के अभाव और अपेक्षित नितिगत सर्मथन के अभाव ने राई–सरसों की खेती को हतोत्साहित किया एवं उत्तर–प्रदेश में इस समूह की फसलों के क्षेत्रफल और उत्पादन में तेजी से गिरावट आयी (सारणी 1)।

वर्तमान में उत्तर–प्रदेश राई–सरसों के कुल क्षेत्रफल में 14.25 प्रतिशत और उत्पादन में 14.24 प्रतिशत का योगदान दे रहा है। प्रदेश में राई–सरसों की औसत उत्पादकता 1000किग्रा प्रति हेक्टेयर है, जबकि राष्ट्रीय औसत 1443 वर्षों (2018–19 से 2023–24) के बीच उत्तर–प्रदेश में राई–सरसों के अंतर्गत क्षेत्रफल एवं उत्पादन में काफी अधिक बढोत्तरी देखी गयी परन्तु उत्पादन में संचयी वार्षिक वृद्धि नकारात्मक रही। संभवतः इसका कारण कम उपजाऊ क्षेत्रफल में राई–सरसों की खेती का विस्तार होना है। उत्तर–प्रदेश के राई–सरसों के उत्पादक जिलों को एचएच (उच्च क्षेत्र–उच्च उत्पादकता), एचएम (उच्च क्षेत्र–मध्यम उत्पादकता), एचएल (उच्च क्षेत्र–निम्न उत्पादकता), एमएच (मध्यम क्षेत्र–उच्च उत्पादकता), एमएम (मध्यम क्षेत्र–मध्यम उत्पादकता), एमएल (मध्यम क्षेत्र–निम्न उत्पादकता), एलएच (निम्न क्षेत्र–उच्च उत्पादकता), एलएम (निम्न क्षेत्र–मध्यम उत्पादकता), एलएल (निम्न क्षेत्र–निम्न उत्पादकता) के रूप में वगीकृत किया जा सकता है (सारणी 2) उच्च क्षेत्र–मध्यम उत्पादकता एवं उच्च क्षेत्र–निम्न उत्पादकता श्रेणियों के अंतर्गत आनेवाले जिलों (चित्र 1) में उत्पादकता बढ़ाने के लिये राई–सरसों की उन्नत खेती की तकनीकों के प्रचार–प्रसार की आवश्यकता है, जबकि कम क्षेत्र के साथ मध्यम एवं उच्च उत्पादकता के अंतर्गत आने वाले जिलों (चित्र 2) में फसल के अंतर्गत क्षेत्रफल को बढ़ाने और इसकी वैज्ञानिक खेती को लोकप्रिय बनाने की आवश्यकता है।

सारणी 1: उत्तर-प्रदेश और भारत में राई-सरसों के क्षेत्रफल, उत्पादन और ऊपज की संचयी वार्षिक वृद्धि दर

अवधि	उत्तरप्रदेश			भारत		
	क्षेत्रफल	उत्पादन	ऊपज	क्षेत्रफल	उत्पादन	ऊपज
1966–67 से 1975–76	0.65	4.93	4.25	1.18	5.19	3.97
1976–77 से 1985–86	–6.80	–5.11	1.81	2.71	6.27	3.47
1986–87 से 1995–96	1.32	7.68	6.28	6.49	9.71	3.03
1996–97 से 2005–06	–4.52	–3.47	1.10	1.18	2.24	1.05
2006–07 से 2017–18	–1.63	0.66	2.32	–1.06	1.05	2.13
2018–19 से 2023–24	10.91	10.20	–0.92	–0.30	7.80	–0.84

राज्य में राई–सरसों की कम उत्पादकता से जुड़ी समस्यायें

- बुआई एवं पकाव के समय उच्च तापमान।

FAARD FOUNDATION फार्ड फाउण्डेशन
FOUNDATION FOR ADVANCEMENT OF AGRICULTURE AND RURAL DEVELOPMENT
कृषि प्रगति एवं ग्रामीण विकास संस्था
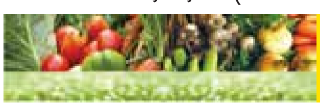
कृषि, ग्रामीण विकास, शिक्षा, पर्यावरण, स्वास्थ्य व उद्यमिता की दिशा में समर्पित
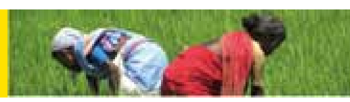

सारणी 2: उत्तर-प्रदेश में जिलेवार राई-सरसों का क्षेत्रफल, उत्पादन और उत्पादकता मैट्रिक्स (विभिन्न श्रेणियों में जिलों की संख्या)

क्षेत्रफल/उत्पादकता	उच्चउत्पादकता (1500 किग्रा/है. से अधिक)	मध्यमउत्पादकता (1000–1500 किग्रा/है.)	निम्नउत्पादकता (1000 किग्रा/है. से कम)
उच्चक्षेत्रफल (15000है.से अधिक)	5	5	4
मध्य क्षेत्रफल (7500 – 15000है.)	9	4	6
निम्नक्षेत्रफल (7500है.से कम)	0	20	21

चित्र 1: उत्तर-प्रदेश में राई-सरसों के अधिक क्षेत्रफल वाले जिले

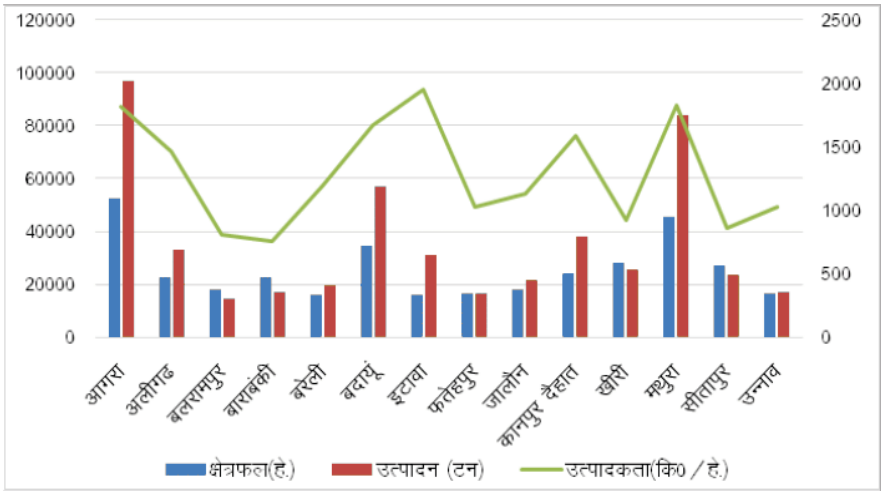

चित्र 2: उत्तर-प्रदेश में राई-सरसों के अधिक उत्पादकता वाले जिले

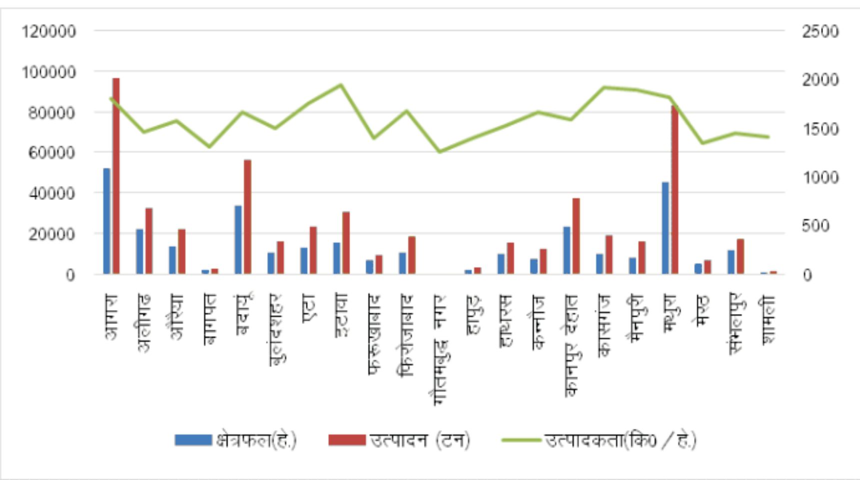

- प्रमुख राई–सरसों उत्पादक जिलों में लवणता से प्रभावित मिट्टी और सिचाई जल की खराब गुणवत्ता।
- उन्नत किस्मों के बीजों की अनुपलब्धता।
- उन्नत उत्पादन और संरक्षण तकनीकों का न अपनाया जाना।
- कृषि यंत्रीकरण का अभाव।
- असंतुलित उवर्रक का प्रयोग।
- तेल प्रसंस्करण ईकाईयों का अभाव।

वांछित समाधान

प्रदेश में राई–सरसों की कम उत्पादकता और वैज्ञानिक खेती को कम अपनाये जाने के लिये जिम्मेदार विभिन्न बाधाओं को दूर करने के लिये निम्नलिखित अल्पकालिक/ दीर्घ कालिक उपायों को अपनाने की आवश्यकता है।

1. किस्म एवं बीज प्रतिस्थापन दर :

22–25क्विंटल/हेक्टेयर ऊपज देने वाली नवीनतम किस्मों/संकर किस्मों को अपनाकर एवं लोकप्रिय बनाकर किस्म प्रतिस्थापन दर (वीआरआर) को 75 प्रतिशत तक बनाए रखा जाना चाहिए। बीज प्रस्थिापन दर (एसआरआर) को कम से कम 50 प्रतिशत बनाए रखना होगा। राष्ट्रीय बीज निगम और राज्य बीज निगम के अलावा, सरसों बीज केंन्द्रों / राज्य कृषि विश्व विद्यायलयों/कृषि विज्ञान केन्द्रों (केवीके) को भी आधार और प्रमाणित बीजों के उत्पादन में शामिल किया जा सकता है। किसानों को उन्नत किस्मों के गुणवत्तापूर्ण बीजों का समय पर वितरण सुनिश्चित किया जाना चाहिए। इसके लिए बीज उत्पादन और प्रसंस्करण अवसंरचना का निर्माण आवश्यक होगा। किसानों की सहभागिता से बीज उत्पादन हेतु अवसंरचना विकसित करने हेतु केवीके को बीज निधि प्रदान की जा सकती है। इन उपायों से उपज में 20–30 प्रतिशत तक की वृद्धि हो सकती है।

2. स्थान विशेष के लिए उपयुक्त किस्मों को अपनाना और लोकप्रिय बनाना:

बुंदेलखंड और मध्य उत्तर–प्रदेश में शीघ्र पकने वाली और पकाव के समय अधिक तापमान सहन करने वाली किस्मों को लोकप्रिय बनाया जाना चाहिए। आगरा जैसे लवणता प्रभावित क्षेत्रों में लवण सहनशील किस्मों सीएस–60, सीएस–63, सीएस–64 जैसी किस्मों को लोकप्रिय बनाया जाना चाहिए। पूर्वी उत्तर–प्रदेश के धान की खेती के बाद परती क्षेत्रों में देर से बोई जाने वाली एवं जल्दी पकने वाली किस्मों को लोकप्रिय बनाने की आवश्यकता है

3. क्षेत्रफल विस्तार:

उच्च एवं मध्यम उत्पादकता वाले जिलों (चित्र 2) में अधिक से अधिक क्षेत्रफल में राई–सरसों की खेती को बढ़ावा देना होगा। इसके लिये किसानो को बड़ी मात्रा में बीजों का वितरण करके, बड़ी संख्या में क्लस्टर अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनों एवं अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनों का आयोजन करके किसानों को राई–सरसों

सारणी 3: राई–सरसों की अधिसूचित किस्में (2015–2025)

क्रम सख्या	प्रजाति	अधिसूचना वर्ष	पकाव की अवधि (दिन)	तेल प्रतिशत	औसत ऊपज (किग्रा / है.)
भारतीय सरसों					
1	आर.जी.एन.–298	2015	143	40	2172
2	अलबेली–1	2015	145	40	2070
3	जे.के.समरिधि गोल्ड	2016	125	41	2500
4	बायर सरसों–5450	2016	130	41.5	2900
5	सी.एस.– 60	2018	125	39.4	2050
6	केसरी–5111	2019	110	41.5	2750
7	आजादमहक	2020	120	41.6	2047
8	डी.आर.एम.आर–150–35	2020	114	40	1800
9	आर.सी.एच.–1	2021	150	38.5	2666
10	पी.डी.जेड.–1	2021	14	38	2644
11	सुरेखा	2022	128	41	3300
12	रोहिनी–डब्लू.आर.आर.–2	2022	139	42.8	1211
13	पूसाबोल्ड–डब्लू.आर.आर.–2	2022	137	34.3	1383
14	वरूणा डब्लू.आर.आर.–2	2022	134	39.1	1685
15	पूसा मस्टर्ड–34	2022	147	36	2609
16	सी.एस.–61	2023	132	39	2046
17	सी.एस.–62	2023	136	39	1959
18	सी.एस.–64	2023	137	38.4	2200
19	पन्त राई–22	2023	130	38.8	1530
20	बी.पी.एम.–11	2024	123	37.8	1859
21	पी.डी.जेड.–14	2024	132	42.1	2148
22	पी.डी.जेड.–15	2024	131	41.8	2049
23	पूसा मस्टर्ड–37	2025	134	41.2	2683
24	बी.पी.एम.–1825	2025	135	41.7	2630
25	बी.पी.एम.क्यू.–47	2025	144	40.5	2348
26	आर.एच.एच.–2101	2025	142	39.7	2849
27	पी.ए.–5252	2025	140	40.0	2796
28	एस.वी.जे.एच.–71	2025	140	39.4	2934
तोरिया					
1	तपेस्वरी	2018	90–95	41	1250
2	त्रिपुरातोरिया–1	2018	86	42.6	850
3	आजादचेतना	2021	90–95	42.2	1440
4	राज विजय तोरिया–2	2021	108–110	42.7	118
पीलीसरसों					
1	जे.के. पुखराज	2016	115–120	40	1750
तारामीरा					
1	ज्वालातारा	2017	133–145	38.9	1350
2	जोबनेरतारा	2017	137–145	39.7	1400
3	कृष्णातारा	2022	139	39.8	1203

की खेती से जोड़ा जा सकता है। इससे काफी बड़े क्षेत्रफल को राई–सरसों की खेती के अंतर्गत लाया जा सकता है। कम पानी एवं आदानों की आवश्यकता के चलते राई–सरसों की फसल को प्रदेश में प्रचलित प्रमुख फसल प्रणालियों (सारणी 4) में शामिल करके इसका उत्पादन एवं क्षेत्रफल बढ़ाया जा सकता है। कृषि जलवायु, क्षेत्र विशिष्ट अंतर फसलों (सारणी 5) को अपनाकर भी राई–सरसो के क्षेत्रफल को बढ़ाया जा सकता है।

4. कृषि यंत्रीकरणः

आज भी उत्तर–प्रदेश में राई–सरसों की बुवाई मुख्यतया छिटकवा विधि से की जाती है जिससे न केवल बीज की मात्रा अधिक लगती है बल्कि फसल की सघनता के कारण उत्पादन भी प्रभावित होता है। राई–सरसों की उन्नत खेती में कृषि मशीनीकरण, विशेषकर बुवाई एवं कटाई के लिये, की नितांत आवश्यकता है जिससे उचित गहराई और अंतराल पर पंक्तिबद्ध बुवाई सुनिश्चित करन में मदद मिल सकती है और कटाई का कार्य भी अधिक आसान हो सकता है जिसक परिणामस्वरूप उत्पादन में 35 प्रतिशत तक की वृद्वि हो सकती है।

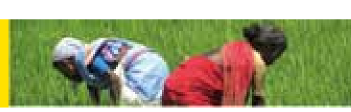

सारणी 4 : उत्तर–प्रदेश के लिए राई–सरसों आधारित फसल प्रणालियां

कमांक	स्थिति	फसलकम
1	सिंचित	बाजरा–सरसों
2	सिंचित	खरीफचारा / मक्का–आलू+सरसों
3	सिंचित	मक्का–शरदकालीनगन्ना+सरसों
4	सिंचित	मक्का / चारा–सरसों–मूंग
5	सिंचित	मक्का–तोरिया–गेहूँ
6	सिंचित	गेहूँ–सरसों
7	सिंचित	तिल–सरसों
8	सिंचित	अपलड धान / मक्का–सरसों
9	सिंचित	उडद / मूंग / लोबिया–सरसों
10	सिंचित	उडद / मूंग–तोरिया–गेहूँ
11	वर्षाआधारित (मध्य क्षेत्र)	मक्का / बाजरा–तोरिया / सरसों
12	वर्षाआधारित (मध्य क्षेत्र)	धान–सरसों
13	वर्षाआधारित (मध्य क्षेत्र)	तिल–सरसों
14	वर्षाआधारित (मध्य क्षेत्र)	उडद / मूंग–सरसों
15	वर्षाआधारित (पश्चिमी क्षेत्र)	परती–सरसों
16	वर्षाआधारित (पश्चिमी क्षेत्र)	ज्वार–सरसों

5. विस्तार प्रणाली को सुदृढ बनानाः

फसल उत्पादन, फसल सुरक्षा एवं उन्नत किस्मों के लाभों को किसानों के खेतों में बड़े पैमाने पर प्रदर्शित किया जाना आवश्यक है। कम / मध्यम उत्पादकता वाले प्रत्येक जिले में कम से कम 1500 अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनो, 250 क्लस्टर अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनों तथा अन्य विस्तार कार्यक्रमों जैसे किसान प्रशिक्षण, गोष्ठी और किसान मेलों के आयोजन के

सारणी 5 : उत्तर–प्रदेश के लिए राई–सरसों आधारित अंतर फसल प्रणालियां

अंतरफसलसंयोजन	पंक्तिअनुपात	स्थिति
गेहूँ+सरसों	9:1	सिंचित
आलू+सरसों	3:1	सिंचित
जौ+सरसों	6:1	वर्षाआधारित
अलसी+सरसों	5:1	वर्षाआधारित
गन्ना+तोरिया	2:1	सिंचित
चना+सरसों	4:1	वर्षाआधारित

राई–सरसों के लिए अनुशंसित बीज उपचार

कवकनाशी	मात्रा (ग्रा. / किग्रा बीज)	बिमारी
एप्रान एसडी 35	6.0	सफेदरतुआ एवंतलासिता
कार्बेन्डाजिम	2.0 – 2.5	सफेदतनागलन
मैनकोजेबअथवाकैप्टॉन	2.0	जड़ गलन एवंम्लानि

माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है।इसके लिए प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मिडिया, सोशल मिडिया प्लेटफार्म का भी उपयोग किया जा सकता है।

6. उर्वरक प्रबंधनः

प्रमुख पोशक तत्वों नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश के अलावा सल्फर, जिंक एवं बोरान का उपयोग राई–सरसों के बीज और तेल उत्पादन बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गैर–फलीदार नाईट्रोजन स्थिरीकरण जिवाणुओं, फास्फोरस की घुलनशीलता सुनिश्चित करने वाले जिवाणुओं का उपयोग भी मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाने के लिये किया जा सकता है।

7. सरसों आधारित मधुमक्खी पालन को बढ़ावाः

सरसों आधारित मधुमक्खी पालन से सरसों के किसानों को अतिक्ति आय और रोजगार मिल सकताहै। साथ ही, सरसों की ऊपज में 10 से 15 प्रतिशत तक की वृद्धि हो सकती है क्योंकि मधुमक्खियां सरसों की प्राकृतिक प्रागणकर्ता हैं।

5. प्रसंस्करण एवं विपणन अनुकूल वातावरणः

विपणन अवसंरचना का विकास, कृषि विज्ञान केंद्रों/ कृषि उत्पादक संगठनों(एफपीओ) में क्लस्टर आधारित तेल निष्कर्षण इकाईयां स्थापित करने से किसानों को सामुदायिक स्तर पर प्रसंस्कृत तेल और खल की बिक्री के माध्यम से 20–25 प्रतिशत अतिरिक्त आय अर्जित करने में सुविधा होगी। इससे उपभोक्ताओं को भी अपने घर पर ही उच्च गुणवत्तावाले उत्पाद प्राप्त करने में मदद मिलेगी।

नोटः इसके अतिरिक्त सिंचित अवस्थामें 40 किग्रा / हैं. सल्फर, 25 किग्रा / हैं. जिंक एवं 10 किग्रा / हैं. बोरान का उपयोग करके राई सरसों की बीज एवं तेल ऊपज को क्रमशः 10 प्रतिशत एवं 1.0–1.5 प्रतिशत बढ़ाया जा सकता है।

❖

राई–सरसों के लिए उर्वरकों की अनुशंसित मात्रा

कवकनाशी	मात्रा (ग्रा. / किग्रा बीज)	बिमारी
एप्रान एसडी 35	6.0	सफेदरतुआ एवंतलासिता
कार्बेन्डाजिम	2.0 – 2.5	सफेदतनागलन
मैनकोजेबअथवाकैप्टॉन	2.0	जड़ गलन एवंम्लानि

फसल	सिंचितअवस्था			वर्षाआधारित		
	नाइट्रोजन	फास्फोरस	पोटाश	नाइट्रोजन	फास्फोरस	पोटाश
सरसों	120–150	50–75	50–75	60–75	25–40	25–40
तोरिया	60–100	30–50	30–50	50	20–30	20–30
पीलीसरसों	60–90	30–50	30–50	–	–	–

गतिविधियाँ

धान की प्रजाति चिंटू

भानु प्रताप मौर्य ग्राम खड़ान धानापुर का DSR का प्लाट

धान की प्रजाति MTU-7029

अशोक कुमार सिंह ग्राम खड़ान धानापुर का DSR-का प्लाट

कामयाबी — चावल का ब्रांड अमेजन और फ्लिपकार्ट पर उपलब्ध, व्यापार को बढ़ावा मिलने की उम्मीद

आदमचीनी चावल पहुंचेगा वैश्विक बाजार में

संवाद न्यूज एजेंसी

पीडीडीयू नगर। जिले में पैदा होने वाले जीआई टैग प्राप्त आदमचीनी चावल की वैश्विक बाजार में पहुंचाने का रास्ता साफ हो गया है। दिल्ली की कंपनी ने आदमचीनी चावल के चंदौली ब्रांड को पैकिंग कराकर विदेशों में भेजने का करार किया है। अब यह ब्रांड अमेजन और फ्लिपकार्ड पर भी उपलब्ध है।

जिले के आदमचीनी चावल के अब अंतरराष्ट्रीय बाजारों में पहुंचने का रास्ता साफ हो गया है। दिल्ली की कंपनी ने आदमचीनी के चंदौली ब्रांड को पैकिंग कराकर विदेशों में भेजने का करार किया है। गल्फ देशों और यूरोपीय बाजारों में इसकी सुगंध व गुणवत्ता की चर्चा होने लगी है। अब आदमचीनी चावल का ब्रांड 250 रुपए किलो की दर से अमेजन और फ्लिपकार्ड पर भी उपलब्ध है।

आदमचीनी चावल का पैकेट दिखाते किसान। संवाद

आदमचीनी का जीआई टैग लेने वाले ईशानी फॉर्मर प्रोड्यूसर कंपनी इमिलिया के निदेशक अजय कुमार सिंह के अनुसार पिछले दो वर्षों में इसकी मांग में उल्लेखनीय बढ़ोतरी हुई है। इससे इसकी कीमत दोगुनी तक पहुंच गई है। इससे किसानों के चेहरे पर रौनक लौट आई है और युवा किसान भी बड़ी संख्या में इसकी खेती की ओर आकर्षित हो रहे हैं।आदमचीनी की खेती करने वाले किसानों का कहना है कि आदमचीनी चावल की महक इसे अन्य प्रजातियों से अलग बनाती है। प्राकृतिक रूप से सुगंधित यह चावल कम लागत में अच्छी पैदावार देता है, जिससे खेती की लागत और लाभ का संतुलन भी मजबूत रहता है। बताया कि विदेशों में प्रीमियम क्वालिटी के भारतीय चावलों की मांग लगातार बढ़ रही है और आदमचीनी चावल इस सूची में तेजी से जगह बना रहा है। अजय सिंह का मानना है कि यदि इस चावल का व्यवस्थित ब्रांडिंग, पैकिंग और क्वालिटी सर्टिफिकेशन किया जाए तो आने वाले वर्षों में यह अंतरराष्ट्रीय बाजार में बासमती की तरह पहचान हासिल कर सकता है।

50 एकड़ में हुई है आदमचीनी की खेती

आदमचीनी चावल की खेती की ओर किसानों का रुझान तेजी से बढ़ा है। इस वर्ष करीब 50 एकड़ में आदमचीनी की खेती हुई है जबकि पिछले वर्ष 40 एकड़ में ही खेती हुई थी। अब बाजार और अच्छी कीमत मिलने से खेती का रकबा बढ़ने का उम्मीद है।

चंदौली में जीआई टैग प्राप्त आदमचीनी चावल को वैश्विक बाजार मिलने से किसानों में हर्ष है। चावल के निर्यात के लिए छूट देने की कवायद चल रही है।
सिद्धार्थ यादव, उपायुक्त उद्योग

धान की सीधी (DSR) बुआई

FAARD FOUNDATION फार्ड फाउण्डेशन
FOUNDATION FOR ADVANCEMENT OF AGRICULTURE AND RURAL DEVELOPMENT
कृषि प्रगति एवं ग्रामीण विकास संस्था

फार्ड फाउण्डेशन के लिए प्रकाशक और मुद्रक प्रो. पंजाब सिंह द्वारा सरस्वती कुंज, नरायणपुर (डाफी) पोस्ट ऑफिस-नैपुरा, वाराणसी-221 011 (उ.प्र.), मेसर्स- बाबाश्री इण्टरप्राइजेज, पाण्डेयपुर वाराणसी-221002 मो. 9984818181 द्वारा मुद्रित, **प्रधान सम्पादकः** प्रो. आर. एम. सिंह